The long awaited Series of

Sanskrit Self Teacher

By

Padmabhushan Pt. Shripad Damodar Satwalek...

(English edition)

is published now.

1- The easiest way to the study of Sanskrit i... shown in this Series.

2- One, who devotes half an hour daily t... these books, can learn within a perio... six months that much of Sanskrit, so as... follow Mahabharat and Ramayana easi...

3- Hundreds of students have been so fa... benefitted by this series.

4- The Series comprises 18 parts.

Price- Ordinary edition Rs. 27.00
(Rs. 1.50 paise for each part)

Hurry up. Make haste to place your order for the books with—

The manager
Swadhyaya Mandal
Killa-Pardi
Dist. Valsad
Gujara...

Printer and Publisher: V. S. Satwale...
Bharat Mudranalay...

महाकवि भूषण कृत

शिवा-बावनी

टीका-टिप्पनी, अलंकार तथा
प्रस्तावना सहित

सम्पादक—
पं० हरिशङ्कर शर्मा कविरत्न,
आर्यमित्र-सम्पादक

प्रकाशक—
रामप्रसाद एण्ड ब्रदर्स,
बुकसेलर्स, आगरा।

मूल्य ।)

विषय-सूची।

नम्र निवेदन

कुछ दिन हुए, महाकवि भूषण रचित, 'छत्रसाल दशक' पर मैंने कुछ नोट लिखे थे, जिन्हें पाठकों ने पसन्द किया और मेरा उत्साह बढ़ाया। आज भूषण महाराज की 'शिवा बावनी' नामक दूसरी प्रसिद्ध पुस्तक पर, कुछ टीका-टिप्पनी करने का दुस्साहस कर रहा हूँ। वस्तुतः किसी महाकवि का आशय समझने के लिये, काव्यमर्मज्ञता की आवश्यकता है, जो मुझ में नहीं है। मैंने तो 'शिवा बावनी' की जो टीकाएं मिल सकीं हैं, उन सबको सामने रख तथा अपनी ओर से कुछ 'नमक-मिरच' मिला कर यह एक नई पोथी तय्यार कर दी है। सम्भव है, पाठकों को वह रुचिकर प्रतीत हो। हाँ, एक बात जरूर है, इस पुस्तक की टीका-टिप्पनी करते हुए प्रमाद से काम नहीं लिया गया। भाव, भाषा और शव्दार्थ की तह तक पहुँचने की पूरी कोशिश की गयी है, भले ही उसमें सफलता न हुई हो। प्रायः प्रत्येक छन्द के अन्त में, उसका स्वतन्त्र भावानुवाद और अलङ्कार भी दे दिया गया है, जिससे पढ़ने वालों को अर्थ समझने में सुविधा हो। कठिनता को सरलता में परिणत करने की ओर पूरा ध्यान रक्खा गया है। जहाँ ऐतिहासिक टिप्पनियों की आवश्यकता हुई है, वहाँ वे संक्षेप में दे दी गयी हैं। अन्त में 'अलङ्कार निर्देश' शीर्षक के नीचे, संक्षेप में अलङ्कारों का संकेत भी कर दिया है।

विविध पुस्तकों में, 'शिवा बावनी' के छन्दों के, विविध पाठ मिलते हैं जिनसे अर्थ समझने में बड़ी गड़बड़ी होती है, परन्तु हमने इस उलझन को दूर करने में यथा शक्ति उपेक्षा से काम नहीं लिया। इस पुस्तक के छन्दों का पाठ और क्रम वही रक्खा गया है जो बहु सम्मत, युक्ति युक्त और प्रसङ्गानुकूल है तथा जिसके कारण प्रकरण-प्रवाह अक्षुण्ण बना रहता है। कहने का अभिप्राय यह है कि पुस्तक को उपयोगी और उपयुक्त बनाने में, हमने अपनी ओर से कोई कमी नहीं की, परन्तु, फिर भी उसमें कितनी ही त्रुटियाँ रह गयी होंगी, जिनका सारा उत्तर-दायित्व, और किसी पर नहीं केवल हम और हमारी अल्पज्ञता पर है।

अस्तु, जिन पुस्तकों से हमने, 'शिवा बावनी' की टीका-टिप्पनी में सहायता ली है, उनके विद्वान लेखकों के प्रति हम अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

आगरा,
शिव त्रयोदशी, १९८४ वि०

विनयावनत—
हरिशङ्कर शर्मा

प्रस्तावना

संसार का प्रवाह सदा प्रवाहित रहता है; काल की गति बड़ी विचित्र है; घटना-चक्र अविराम रूप से घूमता रहता है। जगत् में नाना प्रकार की घटनाएं घटीं; भयङ्कर वज्रपात हुए; संकट पूर्ण संघर्षों का तूफ़ान आया; क्रूरता की आंधी चली; नृशंसता की आग बरसी; दया का समुद्र उमड़ा, प्रेम-सहानुभूति की गंगा बही—परन्तु इन सब बातों को आज हम नहीं जानते, हमारे पास उनकी जानकारी के लिये कोई साधन भी नहीं है। जिन घटनाओं का जगत् को ज्ञान है वह उस तक केवल साहित्य द्वारा पहुँची हैं। महाकवियों और सुलेखकों के विमल विवेक के बल-बूते पर ही हम सगर्व कहा करते हैं कि भारत-वसुन्धरा को, मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्र ने अपने पाद-पद्मों से पवित्र किया था; आनन्दकन्द व्रजचन्द श्री कृष्णचन्द ने उसे अपने अवतरण द्वारा गौरव दान दिया था; हिन्दू कुल-कमल-दिवाकर महाराणा प्रताप यहीं जन्मे थे; वीर शिरोमणि महाराज शिवाजी की यही कर्मस्थली रही है—इत्यादि। यदि आज हमारे पूज्य पूर्वजों द्वारा प्रदत्त, विशाल ग्रन्थ रत्न, जगत् में न जगमगा रहे होते तो हमें उनके सुयश-कीर्तन का सौभाग्य कदापि प्राप्त न होता। कहने का प्रयोजन यह है कि किसी देश या राष्ट्र की गौरव-गरिमा उसके साहित्य द्वारा ही जानी जा सकती है। जातीय साहित्य का ऊँचा आदर्श ही भावी सन्तान को उठाता

और उन्नति की ओर ले जाता है। जिन विद्वानों की प्रतिभा-प्राची से साहित्य-सूर्य उदय होता है वह धन्य हैं। राष्ट्र निर्माण का अधिकतर काम उन्हीं के करामाती क़लम की नोक द्वारा होता रहता है। आदि कवि महात्मा वाल्मीकिजी और गोलोक-वासी गोस्वामी तुलसीदासजी न होते तो आज राम का कोई नाम भी न जानता। जानता भी तो इस प्रकार नहीं जिस तरह अब उनका घर घर में गुण गान हो रहा है। दूर जाने की ज़रूरत नहीं कुछ शताब्दियाँ पीछे हट कर देखिये महाकवि भूषण ने महाराज शिवराज के पराक्रमपूर्ण कार्य-कलाप का वीर भाव भरित भाषा में किस विलक्षणता से वर्णन किया है। हम तो समझते हैं, उत्तर भारत में शिवराज की कीर्ति को अजरा-अमरा बनाने में भूषण कविराज का बहुत बड़ा हाथ है। वह युग धन्य था जब प्रतिभाशाली विद्वानों को राज्य साहाय्यपूर्वक अपूर्व ग्रन्थ-रचना के लिये निश्चिन्त कर दिया जाता था। वे पूरी स्वतन्त्रता और निश्चिन्तता के साथ ऐसे ग्रन्थ रत्नों द्वारा साहित्य-भण्डार भर जाते थे जिनकी समता करने वाला फिर कोई दिखायी न देता था। खेदपूर्वक लिखना पड़ता है कि अब और तब की परिस्थिति में, कितना बड़ा अन्तर है। इस प्रतिकूल परिस्थिति का परिणाम प्रत्यक्ष है। दैव दुर्विपाक से वैसे ग्रन्थों का लिखना तो कहाँ उनका समझना भी कठिन हो गया है।

मध्यकालीन भारत का इतिहास पढ़ने से पता लगता है कि उस समय राजे-महाराजे अपने दरबारों में चारण तथा कवियों को रखते थे। कवि लोग राज-कवि कहलाते थे; उनका काम सामयिक युद्धों तथा अन्य घटनाओं को ऐतिहासिक दृष्टि से

काव्य-मयी भाषा में लिपिबद्ध करना होता था। चारण लोग उक्त घटनाओं को केवल ऐतिहासिक दृष्टि से पद्य में लिखते थे। चारणों की रचना का साहित्यिक मूल विशेष न होता था। राजकवि (Bard) अपनी अनुपम कल्पना शक्ति के प्रभाव से, घटित घटनाओं को, बड़ी ही चमत्कृत भाषा में, पाठकों के आगे रखते थे। पढ़ने या सुनने वाले की तबियत फड़क जाती थी और उसे अपूर्व आनन्द प्राप्त होता था। इसमें सन्देह नहीं कि इन राज-कवियों की कविताएं कविजनोचित अतिशयोक्ति रहित न होती थीं। जहाँ उन्हें अन्य अनेक अपेक्षित गुणों द्वारा, कविता-कामिनी का कलित कलेवर अलंकृत करना पड़ता था वहाँ वे अतिशयोक्ति से भी काम लेना न भूलते थे। ये राजकवि राजपूतों के साथ युद्ध में जाते, उन्हें वहाँ सहायता देते, उत्साहित करते तथा लड़ाइयों का आँखों देखा हाल लिखते थे। बूंदी के नरेश महाराज छत्र-साल के दरबार-कवि गोरे लाल जिस काम को अपने 'छत्र प्रकाश' नामक काव्य ग्रन्थ द्वारा करने में समर्थ हुए, वही काम शिवाजी महाराज के राजकवि भूषणजी 'शिवराज भूषण' 'शिवाबावनी' तथा कई अन्य महत्त्वपूर्ण पुस्तकें लिख कर कर गये। कविराज भूषण ने अपने अन्य अनेक सम सामयिक कवियों की भाँति, शृङ्गारमयी कविता कर, नायिकाओं की लटों में लटकना पसन्द नहीं किया बल्कि उनका मार्ग दूसरा था; वे वीररस के सिद्ध कवि थे, उनकी वीरतापूर्ण कविताओं के कारण कायर पुरुषों के कलेजे भी उत्साह से उछलने लगते हैं. वीरों में असीम साहस भर जाता है, निर्बलों के शरीर में बल के बलाहक दौड़ने लगते हैं। भूषण की कविता पाठक को

अधोगति गर्त्त की ओर न लेजा कर उन्नति-शिखर पर चढ़ाती है, उठाकर आसमान पर रख देती है। हिन्दू जाति की आज इस गिरी अवस्था में भी भूषण की कविता मुर्दों में नवजीवन संचार कर रही है। उसके पढ़ते ही उत्साह से भुजा फड़कती और शरीर में शक्ति की बिजली कड़क उठती है। वस्तुतः वीर रस की विपुल वर्षा करने में भूषण अपनी उपमा नहीं रखते। हम चाहते हैं कि भूषण कवि का काव्य पढ़ने से पूर्व पाठक, उनके चरित्र से सम्बन्ध रखने वाली कुछ बातें जान लें और देखें कि जिस महाकवि का यह महत्त्वपूर्ण वीर काव्य है, स्वयम् उसका जीवन कितना आदर्श और ऊँचा रह चुका है।

भूषण कौन थे ?

कविराज भूषण का जन्म, कानपुर ज़िले के त्रिविक्रमपुर या तिकवाँपुर ग्राम में हुआ था। इनके पिता रत्नाकर जी, कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। वे देवी में बड़ी भक्ति रखते थे। अपने प्रायः सब कामों के प्रारम्भ में देवी की अर्चना करते और उससे आशीर्वाद मांगते थे। कहते हैं कि चिन्तामणि, भूषण, मतिराम और नीलकण्ठ (जटा शंकर) ये चारों पुत्र रत्नाकर जी को देवी की दया से ही प्राप्त हुए थे। रत्नाकरजी के इन चारों पुत्रों का कवीश्वर होना एक आकस्मिक घटना समझनी चाहिये। भूषण के जन्म संवत् का ठीक ठीक पता नहीं चलता। शिवसिंह-सरोज में उनका जन्म १७३८ वि० में हुआ लिखा है, परन्तु प्रसिद्ध साहित्यसेवी मिश्र-बन्धु महोदय इससे सहमत नहीं हैं। वे कहते हैं कि शिवसिंह जी (सरोज के रचयिता) भूषण का शिवाजी और छत्रसाल के दरबार में रहना मानते हैं। परन्तु शिवाजी १६८० ई० (अर्थात् १७३६–३७ वि०) में गोलोकवासी हुए थे तो क्या भूषण जी अपने जन्म के साल डेढ़ साल पहले ही शिवाजी के यहां पहुँच गये। मिश्रबन्धुओं ने बड़ी खोज तथा ऊहा-पोह के पश्चात् भूषण का जन्म–संवत् १६१४ ई० और मरण संवत् १७१५ ई० के लगभग माना है जो ठीक प्रतीत होता है। महाकवि भूषण १०२ वर्ष जीवित रह कर अपने कवितामृत से सहृदय-समाज को परितृप्त करते रहे इसमें किसी को सन्देह नहीं

है । भूषण जी जहाँ इतने बड़े कवीश्वर थे वहाँ उन्होंने आयु भी अच्छी पाई और उन्हें सम्मान भी खूब मिला। भूषण बाल्यकाल से ही बड़े स्वतन्त्र और उद्दण्ड प्रकृति के थे। उन्हें पढ़ाने लिखाने का उचित उद्योग किया गया परन्तु इस ओर उनकी प्रवृत्ति न हुई। घर पर निकम्मे पड़े रह कर मौज मारना इन्हें बहुत पसन्द था। भाई कमाते और भूषण जी खाते थे। एक दिन विचित्र घटना हुई—ऐसी घटना कि जो अगर न होती तो आज भूषण कविराज सुविस्तीर्ण साहित्याकाश में सूर्य की भांति प्रदीप्त दिखायी न देते। दोपहर का समय था, भूषण जी भोजन करने बैठे, दाल में नमक कम था अतएव उन्होंने अपनी भाभी से कहा—'थोड़ा सा नमक दीजिए'। एक तो निकम्मे बैठ कर खाना और फिर यह स्वाद-सवाद! प्रक्षुब्ध भाभी की क्रोधाग्नि पर गाल की बुकनी पड़ गई। वह और भी झुंझला कर कहने लगी—"मानो नमक ला कर रख दिया है न जो ला कर परोस दूं"। बात साधारण थी परन्तु वह जिस भद्दे भाव से कही गई थी उससे भूषण का हृदय बिंध गया। वह उत्तेजित होगये और मुंह का ग्रास उगल कर कहने लगे—अच्छा भाभी! अब हम जब नमक कमा कर लावेंगे तभी तुम्हारे चौके में भोजन करेंगे। प्रणवीर भूषण भाभी की भर्त्सना सुन कर, घर से निकल पड़े और यत्र-तत्र विद्याध्ययन करने लगे। इस सम्बन्ध में एक किम्बदन्ती प्रसिद्ध है कि घर से निकल कर भूषण देवी के मन्दिर में पहुँचे और वहां अपनी जीभ काट कर उस पर चढ़ाई और वह उसी समय से कवीश्वर हो गए। परन्तु इसे देवी भक्तों के भक्ति भाव का अतिरेक मात्र ही समझना चाहिये। हमारी समझ में

अध्ययनकाल में ही भूषण की कवित्व शक्ति का उदय हुआ और तभी से वह सुन्दर रचना करने में प्रवृत्त हुए।

भूषण जी घूमते फिरते चित्रकूट नरेश के पुत्र रुद्रराम के यहां भी पहुँचे और उनके आश्रम में कुछ दिन निवास भी किया। रुद्रामजी भूषण की अद्भुत प्रतिभा शक्ति देख बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने उन्हें १६६६ वि० में 'कवि भूषण' की उपाधि से अलंकृत किया। रुद्रराम की दी हुई यह उपाधि इतनी प्रसिद्ध हुई कि अन्त में उसने इस महाकवि का नाम ही भुला दिया और सब लोग उसे भूषण कह कर ही पुकारने लगे। भूषण ने इस उपाधि से सम्मानित होने से पूर्व भी कुछ रचनाओं में अपनी छाप 'भूषण' लिखी है। इससे जाना जाता है कि वह अपना जो उपनाम रख चुके थे वही उन्हें उपाधि भी दी गई। सम्भव है भूषण का पूरा नाम ब्रजभूषण, रामभूषण, गिरिजा भूषण आदि रहा हो और वह अपनी कविता में उपनाम के स्थान पर अपने आधे नाम का प्रयोग करने लगे हों जैसा कि आज कल भी कुछ कवि करते हैं। जो हो, प्रायः सब चरित्र लेखकों की इस विषय में यही सम्मति है कि इन कवीश्वर के असली नाम का पता नहीं चलता और 'भूषण' उनकी उपाधि तथा उपनाम है।

गुणग्राहक रुद्रराम से सम्मानित होकर तथा और भी जहाँ तहाँ भ्रमण करते हुए भूषण कविराज ५४ वर्ष की अवस्था में शिवाजी के दरबार में पहुँचे।

यह लगभग १६६७ ई० की बात है जब शिवाजी दक्षिण देश के अनेक दुर्गों पर अपनी विजय-वैजयन्ती फहराकर रायगढ़ को

राजधानी का रूप दे चुके थे। भूषण के घर से निकल कर रुद्रराम के आश्रम में आने तक की घटनाओं में तो चरित्र-लेखकों के मध्य मत भेद नहीं है, परन्तु इस आश्रम से वे कहाँ गये इसमें विद्वानों की राय नहीं मिलती। कोई कहता है कि भूषण जी रुद्रराम के आश्रम से औरङ्गज़ेब के यहाँ गये, और वहाँ से, खट-पट होने पर शिवाजी के दरबार में पहुँचे। परन्तु मिश्रबन्धु इस मत के समर्थक नहीं वे उसे 'अग्राह्य' समझते हैं। उधर चिटणीस अपनी बखर में लिखता है कि चिन्तामणि के भाई भूषण शिवाजी के दरबार से औरङ्गज़ेब के यहां पहुँचे, वहां जो घटनाएँ हुईं उनमें से एक इस प्रकार है—भूषण जी ने औरङ्गज़ेब से यह कहा कि मेरे भाई (चिन्तामणि) की शृङ्गार रस की कविता सुनकर आपका हाथ ठौर-कुठौर पड़ता होगा पर मेरा काव्य सुनकर वह मूंछों पर पड़ेगा सो पहले पानी से धोकर हाथ शुद्ध कर लीजिये। इस पर बादशाह ने कहा कि यदि हाथ मूंछों पर न गया तो तुम्हें मृत्यु-दण्ड मिलेगा। इतना कह कर हाथ धोकर वह छन्द सुनने लगा। भूषण ने भी वीररस के ऐसे बढ़िया छन्द शिवाजी की प्रशंसा में पढ़े कि उनमें शत्रु-यश का गान होते हुए भी औरङ्गज़ेब का हाथ मूंछों पर गया। यह हाल महाराज शिवाजी को सुन पड़ा तब उन्होंने भूषण को फिर अपने दरबार में बुलाया और भूषण जी वहां पधारे।

औरङ्गज़ेब के पास जाने से पहले भूषण शिवाजी के दरबार में पहुँचे अथवा उसके बाद इस पर दो मत हो सकते हैं परन्तु यह निर्विवाद है कि भूषणजी औरङ्गज़ेब के यहाँ गये अवश्य और उन्हें अपनी कविता भी सुनायी। अस्तु, भूषणजी

शिवाजी की राजधानी रायगढ़ में पहुंचे। सन्ध्या हो चुकी है, सुन्दर उद्यान में एक तेजोमय मूर्ति शीतल, मन्द, सुगन्ध समीर के सेवनार्थ इधर से उधर गम्भीर गति से घूम रही है। उसके प्रसन्न मुखमण्डल से प्रताप-मार्तण्ड की रश्मियां प्रस्फुटित हो रही हैं। परस्पर पूछ-गछ होने के पश्चात् उस वीरवर को ज्ञात हुआ कि यह कोई कवीश्वर हैं जो शिवाजी से भेंट करने के लिये आये हैं। अतएव उसने कहा कविवर! शिवाजी से तो आप भेंट करेंगे ही और उनको सुनाने के लिये बहुत सी रचनाएं भी लाये होंगे। बड़ी कृपा हो यदि आप हमें भी उसमें से एक आध छन्द सुनावें। सहृदय श्रोता चाहिए, कवि को कविता पाठ से कब संकोच हो सकता है। श्रान्त पथिक ने अधिक आग्रह करने पर नीचे लिखा छन्द, ऐसी वीरता से सुनाया कि सुनने वाला दंग रह गया और बार बार सुनकर भी उसकी तृप्ति न हुई—

इन्द्रजिमि जम्भ पर बाड़व सुअम्भ पर,
रावन सदम्भ पर रघुकुल राज है।
पौन बारि बाह पर संभु रति नाह पर,
ज्यों सहस बाह पर राम द्विजराज है॥
दावा द्रुम दण्ड पर चीता मृग झुंड पर,
भूषन वितुण्ड पर जैसे मृगराज है।
तेज तम अंस पर कान्ह जिमि कंस पर,
त्यों मलिच्छ वंस पर सेर सिवराज है॥

कुछ लोगों का कथन है कि भूषण से ५२ बार यह कवित्त पढ़वाया गया, कोई कहते हैं कि एक ही छन्द बार बार

नहीं पढ़ा बल्कि उस समय भूषण ने ५२ विविध कवित्त पढ़ कर सुनाये जो पीछे 'शिवाबावनी' के नाम से प्रसिद्ध हुए। परन्तु मिश्रबन्धु महाशय उपर्युक्त छन्द का केवल १८ वार पढ़ा जाना मानते हैं। वे कहते हैं कि इससे आगे इस अपरिचित व्यक्ति ने भूषण से १९ वीं वार भी छन्द पढ़ने को कहा परन्तु थक जाने के कारण वह अधिक न पढ़ सका। तब उस वीरवर ने बताया कि मैं ही शिवाजी हूं। आपने यह छन्द इतना सुन्दर लिखा है कि मैं अपने मन में संकल्प कर चुका था कि जितनी बार आप उसे पढ़ेंगे उतने ही लक्ष रुपये, उतने ही हाथी, और उतने ही गांव आपकी भेंट करूंगा। परन्तु आप अधिक न पढ़ सके। जितनी बार आपने यह कवित्त पढ़ा उसके लिये मेरा संकल्पित प्रेमोपहार स्वीकार कीजिये। कुछ विद्वानों का यह भी मत है कि छन्द सुनने के बाद उस अज्ञात व्यक्ति ने भूषण को वचन दिया था कि कल प्रातःकाल दरबार में आना और तब हम तुम्हें शिवाजी से मिला देंगे। तदनुसार भूषण दरबार में पहुंचे और वहां ज्ञात हुआ कि कल का वह अपरिचित वीर व्यक्ति ही सिंहासनासीन शिवाजी महाराज हैं। इस मत के लोग उद्यान में नहीं प्रत्युत इसी समय शिवाजी द्वारा भूषण को उपहार प्रदान किये जाने की बात मानते हैं। जो हो, पर इसमें सन्देह नहीं कि भूषण ने उपर्युक्त छन्द शिवाजी को अनेक बार सुनाया जिसे सुन कर वह परम प्रसन्न हुये और उपहार स्वरूप उन्होंने उन्हें पुष्कल धन प्रदान किया तथा अपना राजकवि बना लिया। इस प्रकार भूषण लगातार कई वर्षों तक शिवाजी के पास रहकर शिवराज भूषण की रचना करते रहे।

महाकवि भूषण के सम्बंध में कहा जाता है कि एक बार जब वे अन्य कवियों के साथ औरंगज़ेब के दरबार में बैठे थे तब बादशाह ने कहा कि कवि लोगो, आप सदैव मेरी प्रशंसा ही किया करते हैं, निन्दा कभी नहीं करते, तो क्या मैं निर्दोष हूं ? औरंगज़ेब की यह बात सुनकर प्रशंसक कवि-मण्डल चुप होगया, उससे कुछ कहते न बना, परन्तु भूषणजी से न रहा गया, उन्होंने निर्भयतापूर्वक कहा, जहांपनाह ! आप को अपनी प्रशंसा इतनी प्यारी लगती है कि कविजन सदैव आपका गुण-गान ही किया करते हैं, दोष कोई नहीं दिखाता। अब अगर हुजूर मेरी जान बख्शने का फ़र्मान लिख दें तो मैं आपके सम्बंध में यथार्थ बातें सुना सकता हूं। औरंगज़ेब ने तुरन्त ऐसा फ़र्मान लिख दिया और भूषण ने उस समय नीचे लिखे छन्द सुनाये—

(१)

किबले की ठौर बाप बादसाह साहजहां,
ताको कैद कियो मानो मक्के आगिलाई है।
बड़ो भाई दारा वाको पकरि कै कैद कियो,
मेहर हू नाहिं माको जायो सगो भाई है॥
बन्धु तो मुराद बक्स वादि चूक करिबे को,
बीच दे कुरान ख़ुदा की कसम खाई है।
भूषन सुकवि कहै सुनो नवरंगजेब,
एते काम कीने तऊ पातसाही छाई है॥

(२)

हाथ तसबीह लिये प्रात उठै बन्दगी कों,
आप ही कपट रूप कपट सुजप के।

आगरे में जाय दारा चौक में चुनाय लीन्हों,
छत्र हू छिनायो मानों मरे बूढ़े बप के ॥
कीन्हों है सगोत घात सो मैं नाहिं कहों फेरि,
पील पै तुरायो चार चुगुल के गप के।
भूषन भनत छरछन्दी मति मन्द महा,
सौ सौ चूहे खाय के बिलारी बैठी तपके ॥

इन छन्दों के सुनाने पर कवि मण्डल में भूषण की बड़ी प्रशंसा हुई परन्तु बादशाह क्रुद्ध होगए और स्वयं तलवार खींच कर भूषण का काम तमाम करने को उठे, परन्तु प्राणदान के लिये वचनबद्ध होने के कारण लोगों ने उन्हें रोक लिया! अन्त में औरङ्गज़ेब झुंझला कर बोले कि भूषण, अब तुम मुझे अपना मुंह मत दिखलाना। भूषण केसर घोड़ी पर चढ़ कर चल दिये। अपने साथी कवीश्वरों सहित मस्जिद को जाते हुए रास्ते में उन्हें औरङ्गज़ेब मिले। भूषण ने साथियों को तो नमस्कार किया परन्तु बादशाह से कुछ नहीं कहा, इस पर औरङ्गज़ेब और भी अप्रसन्न होगए, और पुछवाया कि भूषण कहां जा रहा है? भूषण कविराज ने पूछने वाले से स्पष्ट कह दिया कि मेरी यह यात्रा शिवराज महाराज की सेवा में उपस्थित होने के लिये है। यह सुन कर औरङ्गज़ेब चौंक पड़े और भूषण के पकड़ने के लिए सवारों को हुक्म दिया। औरङ्गज़ेब अच्छी तरह जानते थे कि भूषणजी शिवाजी के पास जाकर उन्हें मेरे विरुद्ध बढ़ावा दे दे कर और भी अधिक भड़कावेंगे। ऐसी दशा में शत्रुता बहुत भयंकर रूप धारण कर लेगी। अस्तु—भूषण की

केसर घोड़ी बहुत आगे निकल गई थी, औरङ्गजेब के सवार इसे न पकड़ सके और खिसिया कर वापिस आगए।

१६७४ ई० के लगभग भूषण कविराज के हृदय में अपनी जन्मभूमि देखने तथा परिवार से मिलने के लिये प्रेम उमड़ा और वे रायगढ़ से चल दिये। मार्ग में छत्रसाल बुंदेला का भी आतिथ्य स्वीकार किया। ये महाराज कविता पर यहां तक मुग्ध होगये कि जब भूषणजी महेवा से बिदा हो चलने लगे तो सम्मानार्थ उनकी पालकी के बांस से अपना कन्धा लगा दिया। भूषण यह देख कर पालकी से कूद पड़े और छत्रसाल की गुण ग्राहकता तथा सहृदयता की भूरि भूरि प्रशंसा करने लगे। भूषण ने इस गुण ग्राहक नरेश की प्रशंसा में कुछ कवित्त भी पढ़े जो पीछे 'छत्रसाल दशक' के नाम से प्रसिद्ध हुए।

चिरकाल पश्चात् घर पहुंच कर भूषण ने वहां कुछ दिनों निवास किया। फिर आप कुमाऊं नरेश की कीर्ति सुन उनसे भी मिलने गये। कवियों के पास बड़े लोगों की भेंट के लिये चमत्कृत वाणी के अतिरिक्त और होता ही क्या है। भूषण जी ने कुमाऊं नरेश को फड़कती हुई आवाज़ से नीचे लिखा छन्द सुनाया:—

उलदत मद अनुमद ज्यों जलधिजल,
बल हद भीम कद काहू के न आह के।
प्रबल प्रचण्ड गण्ड मण्डित मधुप वृन्द,
बिन्ध्य से बुलन्द सिन्धु सातहू के थाह के॥
भूषन भनत भूल झम्पति झपान झुकि,
झूमत झुलत झहरात रथ डाह के।

मेघ से घमंडित मजेजदार तेज पुंज,
गुंजरत कुंजर कुमाऊं नर नाह के ॥

राजा ने उपर्युक्त कवित्त को सुन कर अनुमान किया कि सम्भवतः भूषण कविराज धन प्राप्ति की प्रबल लालसा से आये हैं इसलिये उन्होंने बिना प्रारम्भिक आदर सत्कार के उन्हें एक दम एक लाख रुपये प्रदान करने की आज्ञा देदी। भूषण को यह बात अच्छी न लगी और तुरन्त कह दिया कि मैं आपके पास धन लेने के विचार से नहीं आया। मैं तो यह देखने आया हूं कि शिवराज महाराज के सुयश से देश कहां तक सौरभित हो रहा है। निस्पृह और उदार कविराज इस प्रकार एक लाख की ढेरी पर लात मार कर अपने घर वापिस आये। कुछ दिन बाद भूषण फिर शिवाजी के दरबार में गये और छत्रसाल के यहां भी आते जाते रहे। इस बीच में उन्होंने कई छोटे मोटे ग्रन्थ लिखे जिनमें से कुछ का तो पता ही नहीं चलता कि कहां गये ? १६८० ई० में शिवाजी का देहान्त हो गया इसके बाद भी भूषण उनके उत्तराधिकारी पौत्र साहुजी के दरबार में जाते-आते और सम्मान पाते रहे। कभी छत्रसाल बुंदेला के पास और कभी रायगढ़ में साहुजी के यहां और कभी अपनी जन्म-भूमि त्रिविक्रमपुर में रह कर भूषण कवीश्वर अपना समय व्यतीत करते रहे। अन्ततः १०२ वर्षों की सुदीर्घ आयु भोगकर १७१५ ई० के लगभग उन्होंने अपनी मानव लीला संवरण की।

ऐतिहासिकों के बहुत खोजने पर भी भूषण के विवाह तथा सन्तानादि का पता नहीं चलता। यह ज्ञात नहीं होता कि उनके

पुत्र-पौत्र कितने थे ? हाँ, इस बात के कितने ही प्रमाण हैं कि उनके वंश में कई अच्छे अच्छे कवि हो गये हैं, इससे सिद्ध है कि भूषणजी का विवाह भी हुआ होगा और उन्हें सन्तान सुख भी प्राप्त हुआ होगा। महाकवि भूषण अन्ततोगत्वा अपनी भाभी के ताने के समय, की गयी प्रतिज्ञा को पालन करने में सर्वथा समर्थ हुए और अचिरकाल ही में पुष्कल-धन राशि के स्वामी बन गये। उन्होंने यश भी खूब पाया। राज दरबारों में भूषण का जितना मान हुआ उतना उस समय और किसी कवि का नहीं हुआ। भूषण महाराज अपने समय के, और इस युग के भी राष्ट्रिय कवि थे। उनमें कविजनोचित निरङ्कुशता और स्वतन्त्रता उचित मात्रा में मौजूद थी। वे नरेशों की प्रशंसा के ही पुल न बांधते थे बल्कि आवश्यकता होने पर उनका दोष दर्शन करने में भी भय न खाते थे। औरङ्गज़ेब के सहायक मिर्ज़ा जयसिंह से दब कर सन्धि करने और उन्हें जीते हुए किले वापिस देने के कारण भूषण ने अपनी व्यंग्यमयी कविता में शिवाजी की बड़ी मीठी चुटकी ली है और उनके इस काम की एक प्रकार से निन्दा की है। कहने का प्रयोजन यह है कि और तो और भूषण स्वयम् अपने चरित नायक वीर शिरोमणि शिवाजी की त्रुटियों का भी कविता में वर्णन किये बिना न मानते थे। सचमुच स्वभाव सिद्ध सच्चे कवि में इस अनुपम गुण का होना आवश्यक है। कवियों को किसी का भय, त्रास वा प्रलोभन सच कहने से नहीं रोक सकता। वे प्रजा तथा प्रजेश के सच्चे सहायक और समालोचक होते हैं। कविकी लेखनी जिस प्रकार गिरों को उठाने की अनुपम शक्ति रखती है उसी प्रकार वह उन्नत देशों को

गिराने के लिये भी बहुत कुछ कर सकती है। भूषण कविराज ने अपनी ललित लेखनी की नोंक से गिरों को उठाया, उठों को आगे बढ़ाया और मैदान में बढ़े हुए वीरों के शरीर में उत्साह और आवेश की ज्वाला जलादी। भूषण में हिन्दुत्व के लिये बड़ा प्रेम था, वे शिखा-सूत्र की रक्षा के लिये सर्वस्व निछावर कर देने के लिए सदा तय्यार रहते थे। उस समय की स्थिति ऐसी ही थी। मुग़ल साम्राज्य का दौरात्म्य बढ़ रहा था, चोटी जनेऊ पर प्रहार कर वैदिक सत्ता की महत्ता मिटायी जा रही थी। हिन्दू धर्म के विरुद्ध जहाद खड़ा कर दिया गया था। ऐसी अवस्था में यदि वीर शिरोमणि शिवराज महाराज गो, ब्राह्मण और वेदों की रक्षा के लिये कृपाण कर में न लेते; और महाकवि भूषण मुर्दों में ज़िन्दगी डालने वाली अपनी ओजस्विनी कविता द्वारा उन्हें उत्साहित न करते तो सम्भव है कि आज हम लोग अपनी वर्त्तमान अवस्था में दिखायी न देते। भूषण महाराज ने उस समय की अंधकार मयी स्थिति देखकर बहुत ठीक लिखा है—"सिवाजी न होते तो सुनति होती सबकी"। वस्तुतः मन्दिरों में मस्जिद बन जातीं और वेद की जगह क़ुरान को मिल गयी होती, शिखा-सूत्र का नाम ही नाम शेष रह जाता। परंतु धन्य है महाराज शिवराज और धन्य है महाकवि भूषण जिन्होंने विकट स्थितिपूर्ण ऐसे भयङ्कर तूफ़ान से आर्यजाति के जीवन-जहाज़ को चकनाचूर होने से बचा लिया! जब तक एक भी हिंदू बालक रहेगा तब तक बराबर उनकी विमल कीर्ति का गायन होता रहेगा। इसमें सन्देह नहीं कि भूषण को अपनी ओजमयी कविताओं में यवनों के प्रति कुछ तीव्र भाषा का प्रयोग करना पड़ा है। परंतु

उस समय की संकटमय परिस्थिति को वही लोग जान सकते हैं। हमारे लिये उसका अनुमान भी करना कठिन है। हिंदूधर्म के अन्धकार मय भविष्य को देखकर उसको उज्ज्वल बनाने के लिये अगर भूषण को कुछ कटु शब्दों का प्रयोग करना पड़ा तो इसके लिये उन्हें दोष नहीं दिया जा सकता। वे निर्दोष हैं अतएव जाति के उद्धारकर्ताओं में समझे जायंगे।

हम पहले ही कह चुके हैं कि भूषणजी के कितने ही ग्रन्थ नहीं मिलते; जो मिलते हैं उनके नाम हैं–शिवराज भूषण, शिवाबावनी और छत्रसाल दशक। इन ग्रन्थों के अतिरिक्त उनकी कुछ फुटकर कविताएं भी हैं जो साहित्य-संसार में बड़े आदर के साथ पढ़ी जाती हैं। इन सब किताबों और कविताओं में महाकवि भूषण ने अपने समय की देश-दशा का वर्णन किया है। मुग़लों की उच्छृंखलता, अनाचारिता तथा उद्दण्डता का हृदयवेधी चित्र खींचते हुए शिवराज महाराज तथा छत्रसाल बुंदेला का कीर्ति-गान किया है। हिंदूधर्म रक्षक अन्य नरेशों की महिमा वर्णन करने में भी भूषणजी ने कम उदारता से काम नहीं लिया। भूषणजी ने अपनी कविता में जो बातें लिखी हैं, वे यों ही बे समझे बूझे नहीं लिखदीं प्रत्युत ऐतिहासिक आधार पर लिखी हैं। उनके कथन और इतिहास के वर्णन में प्रायः सर्वत्र समानता मिलती है। यहाँ हम भूषण कविराज की लिखी उपर्युक्त पुस्तकों का कुछ परिचय करा देना आवश्यक समझते हैं—

शिवराज भूषण—इस ग्रंथ में भूषणजी ने शिवराज महाराज की गुण-गरिमा का गायन किया है, साथ ही उसमें

साहित्यिक अलङ्कारों की विशद विवेचना भी की है। अर्थात् अलङ्कारों के लक्षण पूर्वक उनके उदाहरण भी दे दिये हैं। यह पुस्तक शिवाजी का चारु चरित्र और काव्य का अनुपम ग्रन्थ है। शिवराज भूषण में विविध छन्द हैं जो भिन्न भिन्न घटनाओं के अवसर पर रचे गये हैं। ऐसा नहीं प्रतीत होता कि लगातार परिश्रम करके एक ही साथ उसकी रचना की गई हो। हाँ पुस्तक के कुछ भाग के सम्बन्ध में यह बात कही जा सकती है।

शिवाबावनी—इस पुस्तक में शिवाजी सम्बन्धी विविध विषयों पर ५२ कवित्तों का संग्रह है। इसके बहुत से छन्द शिवराज के अभिषेक के बाद की घटनाओं से सम्बन्ध रखते हैं। बीजापुर और गोलकुण्डा की बादशाहतें तो शिवाजी द्वारा पराजित होकर उनके अधीन होगयी थीं। अतएव इस पुस्तक में उक्त रियासतों का थोड़ा और दिल्ली की लड़ाइयों का पर्याप्त वर्णन किया गया है।

छत्रसाल दशक—इस छोटी सी किताब के १० कवित्तों में भूषण ने अधिकतर महेवा के राजा छत्रसाल का यश-गान किया है। एक आध स्थान पर छत्रसाल हाड़ा का भी वर्णन है। भूषणजी छत्रसाल बुंदेला के दरबार में कई बार आये गये और वहाँ रहे भी; अतएव उन्होंने इस राजा के सम्बन्ध में अवश्य ही और कई ग्रन्थ रचे होंगे जो अब नहीं मिलते। 'छत्रसाल दशक' के कवित्त उच्च कोटि के हैं। उनकी रचना बड़ी सुन्दर हुई है। यह कवित्त भूषण की पालकी के डण्डे से

छत्रसाल के कन्धे लगाने की घटना को लक्ष्य में रखकर रचे बताये जाते हैं।

फुटकर काव्य—इन छन्दों का कोई क्रम नहीं है। कोई कवित्त किसी घटना का वर्णन करता है और कोई किसी लड़ाई पर प्रकाश डालता है। इन फुटकर कविताओं में भी भूषणजी की प्रतिभा भली भाँति प्रस्फुटित हुई है। प्रत्येक पद्य ग़ज़ब का है। आद्योपान्त पढ़ जाइये एक से एक बढ़ कर छन्द मिलेगा, बढ़िया से बढ़िया कविता दिखायी देगी।

भूषण ने अपनी प्रायः सब कविताएं अधिकतर व्रजभाषा में लिखी हैं। उनमें बुंदेलखण्डी, फ़ारसी तथा खड़ी बोली के शब्द भी कहीं कहीं आगये हैं। इन्होंने अपनी समस्त रचनाओं में जिन दस छन्दों का प्रयोग किया है उनके नाम ये हैं:—मनहरण, मालती सवैया, किरीट सवैया, हरिगीतिका, लीलावती, अमृतध्वनि, दोहा, माधवी सवैया, गीतिका और छप्पय। इनकी कविताओं में कई छन्द तो कितनी ही वार प्रयुक्त हुए हैं। भूषणजी की कविता के नायक शिवाजी और छत्रसाल दो ही थे। शिवाजी की प्रशंसा करते करते तो उन्होंने उन्हें भगवान का अवतार तक कह डाला है।

आशा है कि महाकवि भूषण के सम्बन्ध में लिखी गयीं यह कतिपय पंक्तियां पाठकों के हृदय में इस विषय की अधिकाधिक जिज्ञासा पैदा करने में समर्थ होंगी। जाति की वर्त्तमान अवस्था को देखते हुए आवश्यकता है कि भूषण का अनुसरण करके

कविजन वीर रस की कविता लिखें और ऐसी रचनाओं का उचित आदर करने के लिये पाठकों में भी सुरुचि उत्पन्न हो। कविता को चमत्कृत बनाते हुए उसकी उपयोगिता पर भी पूरा ध्यान रखने की ज़रूरत है। जो रचना काव्य और उपयोगिता दोनों की दृष्टि से उत्तम है उसी का प्रचार और आदर होना अधिक उपयुक्त है।

छत्रपति शिवाजी

वंश-विवरण

महाराष्ट्र में भौंसला वंश बहुत प्रसिद्ध है। इसी वंश में बहुत पूर्व शम्भाजी नामक एक पराक्रमी पुरुष हुए जिनका पुत्र बावजी (बापूजी) था। बावजी या बापूजी के दो पुत्र हुए—मालोजी और विठोजी। मालोजी शिवाजी के पितामह थे। ये बड़े वीर थे; इन्हें इनकी वीरता के कारण कई स्थानों में बड़े बड़े पद प्राप्त हुए थे; जागीरें मिली थीं, और उन्होंने अपने को अहमदनगर की निज़ामी का सहायक सिद्ध किया था। मालोजी की पत्नी दीपाबाई के गर्भ से दो पुत्र पैदा हुए—शाहजी और शरीफ़जी। शाहजी का जन्म १५९४ ई० में हुआ था। यही शिवाजी के पिता थे। शाहजी बचपन में ही बड़े वीर और प्रतापी थे। इन्होंने छोटी आयु में ही शस्त्रविद्या का अच्छा अभ्यास कर लिया था। इनका विवाह १६०४ ई० में जीजीबाई के साथ हुआ था। १६२० ई० में मालोजी बहुत सी जागीर छोड़ कर परलोक-वासी हुए और उनके पुत्र उत्तराधिकारी बने। शाहजी अपनी जागीर का प्रबन्ध बड़ी योग्यता पूर्वक करने लगे, उनके अच्छे व्यवहार से सब लोग सन्तुष्ट रहते थे। इन्हें भी अपने पिता की भाँति अहमदनगर की सहायता करने में कोई संकोच न होता था।

मुग़ल सम्राट् जहाँगीर ने, १६१६ ई० में, शाहजहाँ को अहमदनगर विजय करने के लिये भेजा। अहमदनगर की सहायता पर मलिक अम्बर तथा शाहजी की शक्तियां थीं जिनके कारण मुग़लों को कई वार पीछे हटना पड़ा था। १६२० ई० में फिर बड़े जोर से मुग़लों ने हमला किया। इस वार शाहजी ने निम्बालकर लुकजी आदि के साथ अहमदनगर की तरफ़ हो मुग़लों से लोहा लिया। इस युद्ध में महाराष्ट्र सेना तथा शाहजी को बहुत सुयश मिला और सर्वत्र उनकी वीरता का वर्णन होने लगा। १६२८ ई० में शिवनेर दुर्ग में जीजीबाई के गर्भ से शिवाजी का जन्म हुआ। इस समय तक मुग़लों के आक्रमण द्वारा अहमदनगर की निज़ामशाही नष्ट होचुकी थी। अतएव शाहजी उसे छोड़कर बीजापुर चले आये। बीजापुर में मुहम्मदशाह आदिल के यहाँ शाहजी की बड़ी प्रतिष्ठा हुई। परन्तु जीजीबाई ने बीजापुर के जल-वायु अनुकूल न होने के कारण तथा और कई प्रकार की असुविधाओं से वहां रहना पसन्द नहीं किया, और वह अपने बालक शिवाजी को लेकर पूना में रहने लगीं। बालक शिवाजी की आयु उस समय १० वर्ष की थी। शाहजीसे शत्रुता रखने के कारण मुसलमानों ने उनकी जागीर को हड़प ने के लिए अनेक उद्योग किये। परन्तु जीजीबाई बड़ी कुशलता से विविध आपत्तियों को सहकर अपनी जागीर की रक्षा करती रहीं और इन दुष्टों से त्राण पाने के लिये अपने पुत्र शिवाजी को इधर उधर छिपाती रहीं। इस समय शिवाजी को कुछ कुछ बोध होने लगा था, और वे इस रात-दिन की दबका-छिपकी से तंग आगए थे। एक दिन जीजीबाई ने इसका

कारण पूछने पर शिवाजी से कहा—बेटा ! जिन दुष्टों के प्रहार से मैं तुम्हें रात दिन सुरक्षित रखने का प्रयत्न करती हूं उन्होंने सारे देश को कठोर आपत्ति में डाल रखा है, हिन्दुओं का हिन्दुत्व हमेशा के लिये मिटा जा रहा है; अत्याचार पीड़ित गो-ब्राह्मण अनाथों की तरह आह भर रहे हैं। दक्षिण की वीरभूमि में आज ऐसा कोई वीर नहीं दिखाई देता जो इस घोर संकट से जाति-जननी की रक्षा कर सके।" जीजीबाई नित्य इसी प्रकार की बातें शिवाजी से कहा करती थीं। उन्हें हिन्दुत्व नष्ट होता देख बड़ा दुःख होता था। माता को इस प्रकार चिन्तित देख शिवाजी जोश में आकर बहुधा कह दिया करते थे—"मा! विश्वास रक्खो, मैं इन दुष्टों को मार कर भगा दूंगा।" जीजीबाई अपने बालक की ऐसी वीर-वाणी सुनकर गद्गद हो जातीं और बड़ी आशा तथा प्रेम के साथ उसका मुंह चूम लिया करती थीं। शिवाजी अन्ततः मुसलमानों के अत्याचार सुनते सुनते तंग आगये, और उनके हृदय में इन लोगों के प्रति घृणा और विद्वेष के भाव उत्पन्न होने लगे।

विवाह और शिक्षा

वीरवर शिवाजीका विवाह निम्बालकरकी पुत्री सुईबाईके साथ हुआ था। पूना नगर, जिसमें शिवाजी अपनी माता के साथ रहते थे, उनके पिता को जागीर में मिला था। शिवाजी के पिता शाहजी इस नगर का प्रबन्ध कोणदेव नामक एक विद्वान् ब्राह्मण द्वारा कराते थे। कोणदेव परम प्रबंध पटु और बड़े बुद्धिमान थे। पूना में शिवाजीकी

देख-रेख का कार्य भी उन्हीं के द्वारा होता था। कोणदेव ने शिवाजी को होनहार समझ उन्हें अस्त्र-शस्त्र सम्बन्धी अनेक बातें बतलाईं। इन्हें इस विद्या में खूब दक्ष कर दिया, यहाँ तक कि शिवाजी के लक्ष्य-वेध को देखकर बड़े बड़े वीरवर आश्चर्य चकित होजाते थे। तलवार चलाने में तो कोई उनकी समता ही न कर सकता था। घुड़-सवार भी वह उच्च कोटि के थे। इतनी अल्पायु में उनका इस प्रकार दक्ष होजाना दादा कोणदेव की असीम कृपा का ही फल था। शिवाजी को पहाड़ों पर घूमने का बड़ा शौक़ था। वे नित्य इधर-उधर गिरि-गुफाओं में जाया करते थे। कभी कभी तो लौटने में इतनी देर कर देते थे कि माता जीजीबाई प्रतीक्षा करती करती व्याकुल होजातीं थीं। दादा कोणदेव साधारण कहने सुनने के अतिरिक्त शिवाजी की इस प्रवृत्ति में कभी बाधक न होते थे; क्योंकि वे उनके स्वभाव को अच्छी तरह जानते थे। अस्तु; शिवाजी पहाड़ों के मार्ग और उनकी कन्दराओं से भले प्रकार परिचित होगए। शिवाजी की वीर-भावनाओं पर मुग्ध होकर कोणदेव जीजीबाई से कहा करते थे कि, शिवाजी के कारण तुम्हारा नाम विश्वविख्यात होजायगा। बाईजी बृद्ध दादा के ऐसे आशीर्वचन सुन गद्गद होजाती थीं।

शिवाजी कोरे रण-पंडित ही न थे उन्हें राज्य-प्रबन्ध की शिक्षा भी अच्छी तरह दी गई थी। अवकाश के समय, विशेष रूप से नियुक्त, पंडित लोग, उन्हें रामायण तथा महाभारतादि की कथा सुनाकर धार्मिक शिक्षा भी दिया करतेथे। शिवाजी में धर्म-भाव कूट कूट कर भरा था। यहाँ तक कि उनका जीवन-मरण धर्म के लिये ही था। धार्मिक प्रसंगों को सुनकर उनकी आँखों से

अश्रु-वर्षा होने लगती थी। प्राचीन वीरविलास की कथा-वार्ता से वे अत्यन्त उत्साहित और प्रभावित होते थे। उन पर सदैव यही धुन सवार रहती थी कि, देश को विधर्मियों से मुक्त कर उसमें पुनः आर्यधर्म और हिन्दूशासन की स्थापना की जाय। वे जन्म-भूमि के रक्षार्थ सदैव अपना रक्त बहाने को समुद्यत रहते थे। शिवाजी चाहते थे कि कोई उपयुक्त अवसर उनके हाथ लगे और वह अपने प्रचण्ड भुज-दण्ड द्वारा जाति-जननी की रक्षा कर सकें। शिवाजी भवानी के बड़े भक्त और श्रद्धालु थे। वे अपने प्रत्येक कार्यका प्रारम्भ देवी का स्मरण करके किया करते थे। शिवाजी का अविचल विश्वास था कि 'रक्षा किया हुआ धर्म रक्षक की अवश्य रक्षा करता है।' वे इस अटल सिद्धान्त पर अन्त तक आरूढ़ रहे।

संघटन और दुर्गविजय

दादा कोणदेव शिवाजी को राजकाज की शिक्षा देते हुए उन्हें उनकी जागीर में घुमाते और हिन्दुओं की अधमावस्था का दिग्दर्शन कराते थे। शिवाजी अत्याचारी मुसलमानों द्वारा मन्दिरों के स्थान में मस्जिदें बनी देख बड़े दुखी होते और उनके उद्धार का उपाय सोचते थे। अस्तु, बाल्य-काल समाप्त कर नवयुवक शिवाजी कार्यक्षेत्र में अवतीर्ण हुए। उनके प्रतापपूर्ण मुखमंडल, विशाल नेत्र, प्रचण्ड भुजदण्ड, तथा तेजोमय मूर्ति को देखकर दर्शक का हृदय-पद्म विकसित होजाता था। वे जिधर जाते उधर ही उनकी अद्भुत सत्ता और महत्ता की धाक जम जाती थी। शिवाजी ने अपनी

सहृदयता द्वारा बहुत से मरहठे वीरों को मुट्ठी में कर लिया था। शिवाजी की लोक-प्रियता यहाँ तक बढ़ी कि मावली जाति के लोग उनके लिये मरने मारने को तैयार हो गये। मावले लोग बड़े युद्ध-कुशल और लड़ाकू थे। वे शान्ति के समय खेती—क्यारी करके जीवन-निर्वाह करते और महाराष्ट्र पर आपत्ति आने के वक्त शत्रुओं का मुख-मर्दन करने के लिये सेना में भरती हो जाते थे। ये लोग बड़े विश्वस्त और स्वदेशभक्त थे, परन्तु इनमें संघटन की कमी थी। शिवाजी ने कर्मपथ पर पैर रखते ही इस वीरजाति को अपना सहायक बनाया; उनकी घरेलू फूट दूर कर एकता स्थापित की और उन्हें मातृ-भूमि की रक्षा करने को तैयार किया। इस जाति के मुख्य पुरुषों के साथ, शिवाजी ने सारे महाराष्ट्र का भ्रमण कर लिया और उन्हें अब कोई नया स्थान देखने को शेष न रहा।

जिस समय शिवाजी कार्यक्षेत्र में उतरे उस समय शाहज़ादा औरंगज़ेब अपनी कुटिल कूटनीति द्वारा दक्षिणी राज्यों की सत्ता को मिट्टी में मिला रहा था। बीजापुर की बड़ी दुर्दशा थी, खानदेश, अहमदनगर, तिलंगाना और बरार पर मुग़ल शासन का आतङ्क छा रहा था। देश की दशा बड़ी शोचनीय थी। टूटे-फूटे क़िलों में सड़े-गले सैनिक अफ़ीमी की सी आँख टिम टिमाया करते थे। ऐसी प्रतिकूल परिस्थिति में शिवाजी को राष्ट्रस्थापना का कार्य करना पड़ा। शिवाजी के साथियों में से देशमुख बाजी फसलकर, यशजी कंक, और तानाजी मूलसरे ये तीन मुख्य पुरुष थे। इनकी सम्मति से शिवाजी ने पहिले पहल सन् १६४६ ई० में गुप्त संधि द्वारा तोरण का सुदृढ़ दुर्ग अधिकृत किया था।

इस क़िले में पूर्व संचित धन भी प्राप्त हुआ था। शिवाजी ने अपने उद्योग द्वारा इसे अभेद्य दुर्ग बना लिया और अब उन्होंने उसका नाम तोरण के बदले पूर्णचन्द्र गढ़ रक्खा। इस क़िले में शिवाजी को जो धन मिला उससे उन्होंने अस्त्र-शस्त्र तथा गोले-बारूद ख़रीदे। सेना में अनेक नए वीरों की भर्ती की और समीपवर्ती महोरवद्ध पहाड़ी पर रायगढ़ नामक क़िला बनवाया। इस क़िले का बनना बीजापुर-सुल्तान को अच्छा न लगा, दरबार में हल चल पड़गई, और सुल्तानने शाहजी से उनके बेटे शिवाजी के इस कार्य के लिये जवाब तलब किया। इधर शाहजी ने समुचित उत्तर देकर सुल्तान का परितोष किया और उधर उन्होंने दादाजी कोणदेव को लिख भेजा कि वे शिवाजी को इस प्रकार स्वेच्छाचारी न बनने दें। दादाजी ने बहुत समझाया परन्तु मातृभूमि के उद्धार की उत्कट अभिलाषा रखने वाले शिवाजी की समझ में कुछ न आया। इतने ही में दैव दुर्विपाक से दादा कोणदेव का अन्तिम काल समीप आगया और उन्होंने शिवाजी को मृत्यु-शय्या के समीप बुलाकर कहा—"वत्स ! गो, ब्रह्मण, हिन्दू जाति तथा देवालयों की रक्षा में कभी प्रमाद न करना। जीवन रहे या नष्ट हो, पर कर्त्तव्य-पथ से विचलित न होना।" दादाजी के देहान्त के बाद जायदाद के समस्त प्रबन्ध का भार शिवाजी पर आ पड़ा।

इस समय शाहजी ने कुछ धन लेने के लिये अपना आदमी कर्नाटक से शिवाजी के पास भेजा। इस पर शिवाजी ने अपने यहाँ की बढ़ती हुई आवश्यकताओं का उल्लेख करते हुए धन भेजने से इनकार कर दिया। शिवाजी का ऐसा रूखा उत्तर पाकर

शाहजी चुप हो गये। इसके बाद शिवाजी ने फ़िरंगजी को समझा-बुझा कर उनसे चाकलपुर का क़िला लिया; सोपा परगने के शासक बाजी मोहिते पर विजय पाया और फिर कोंडाना या कुण्डाना के क़िले पर अधिकार जमाया। यह क़िला पूना से लगभग १४ मील की दूरी पर है। इसका नाम शिवाजी ने 'सिंहगढ़' रक्खा। 'सिंहगढ़' की प्राप्ति बहुत लाभदायक सिद्ध हुई। अब शिवाजी पूना और सूपा के अतिरिक्त बारामती तथा इन्द्रपुर के भी स्वामी बन गये। इसके बाद उन्होंने पुरन्धर, रोहिड़ तथा कल्याण तक के सब क़िलों को अपने क़ब्ज़े में कर लिया। इस प्रकार शिवाजी का प्रताप बराबर बढ़ता गया। वे बीजापुर के सुल्तान को बराबर यही लिखते रहे कि मैं जो कुछ कर रहा हूँ उसे आप अपने शासन का सीमा-विस्तार ही समझिये।

शाहजी क़ैद में—

शिवाजी ने अब तक जो कुछ किया रक्त की बूंद गिराये विना निर्भयता पूर्वक किया। इनकी इस सफलता से बीजापुर का सुलतान मन ही मन कुढ़ने लगा। कल्याण पर अधिकार जमाते ही बीजापुर से उनकी खटपट हो गई। एक दिन अचानक शिवाजी को, बीजापुर से कल्याण के सूबेदार मौलाना अहमद के पास, कुछ ख़ज़ाना भेजे जाने की खबर लगी। अत्याचारियों के धन लूटने में कोई हानि न समझ शिवाजी ने उक्त ख़ज़ाना लूट लिया और सारी सम्पत्ति लाकर रायगढ़ में जमा कर दी। इसी बीच में शिवाजी ने काङ्गोड़ी, टोंग्र, विकौना, भूरुप, कारी इत्यादि क़िले भी

जीत लिये। कोकन के कई नगर लूटने से जो धन प्राप्त हुआ था वह सैनिक शक्ति की उन्नति में लगाया गया।

शिवाजी ने कल्याण के सूबेदार मौलाना अहमद को क़ैद कर बीजापुर भेज दिया। सुल्तान ने जिस समय ये सब बातें सुनीं एकदम क्रुद्ध हो उठा और शिवाजी के दमन की विधि सोचने लगा। सुल्तान समझा कि इन सारे पापों की जड़ शाहजी है, वही कर्नाटक से अपने बेटे शिवाजी को इस प्रकार अराजकता पूर्ण कार्य करने के लिये उत्साहित करता रहता है; अतएव उसे क़ैद करना चाहिये। सुल्तान की आज्ञा से मुहुदल के नायक वाजो-घोरपड़े ने विश्वासघात पूर्वक धोखे से निरस्त्र शाहजी को क़ैद कर कर्नाटक से बीजापुर भेज दिया। बीजापुर सुल्तान ने शिवाजी के सारे स्वेच्छाचारों का दोष शाहजी के मत्थे मढ़ा और जब तक शिवाजी आत्मसमर्पण न कर दे तब तक के लिये उसे कालकोठरी में बन्द कर दिया। शाहजी ने अपनी बहुत कुछ निर्दोषता सिद्ध की परन्तु सुल्तान ने एक न सुनी। इस समय शिवाजी अपने कारण अपने पिता के प्राण संकट में देख आत्म-समर्पण करने को तैयार हुए। परन्तु शिवाजी की पत्नी सुईबाई ने उन्हें सावधान किया और कहा कि—"नाथ! मुसल्मानों की चाल में आकर कहीं आप भी क़ैद न हो जायँ। अब तो कोई ऐसा उपाय कीजिये कि आप भी स्वतन्त्र रहें और मेरे श्वशुर अर्थात् आपके पिताजी भी मुक्त हो ज़ायँ।" पत्नी की समयोचित चेतावनी ने शिवाजी के दिल पर बड़ा असर किया। उन्होंने आत्म समर्पण का विचार त्याग कर पिता के उद्धार के लिये, अहमदनगर व बीजा-पुर के शत्रुसम्राट् शाहजहाँ से सहायता प्रदान करने की प्रार्थना की।

शाहजहाँ ने शिवाजी की इस प्रार्थना को स्वीकार कर लिया। परन्तु शाहजहाँ की सहायता प्राप्त होने के पूर्व ही सुल्तान ने मुग़लों की सेना के भय से शाहजी को कारागार से मुक्त कर केवल नज़रबन्द कर दिया। फिर शिवाजी ने शाहजहाँ की मदद लेना उचित न समझा।

उधर शाहजी के नज़रबन्द रहने से कर्नाटक का सारा प्रबन्ध बिगड़ गया, जागीरदार आपस में लड़ने लगे, और बड़ी गड़बड़ी फैल गई। बीजापुर सुल्तान ने इस अशान्ति को दबाने के लिये कई शासक भेजे पर किसी को कुछ सफलता प्राप्त न हुई। अन्त में सुल्तान ने शाहजी को ही कर्नाटक भेजा जिससे सब विद्रोह शान्त हो गये। इस शान्ति-स्थापना में शाहजी के बड़े पुत्र शम्भाजी काम आ गये। अपने बड़े बेटे के मरने के कारण शाहजी को बड़ा दुःख हुआ जिससे उनके शासन कार्य में शिथिलता दिखायी देने लगी। भीतरी झगड़े फिर उठ खड़े हुए जिससे बीजापुर सरकार शाहजी से असन्तुष्ट हो गई और यह शंका करने लगी कि शाहजी अपने पुत्र शिवाजी को सहायता दे रहा है अतएव उसका पूर्ण रूप से दमन करना चाहिये।

सफलता का समारम्भ

इस समय शिवाजी महर ग्राम में रहते थे। बीजापुर के सुल्तान ने बाजी श्यामराजे और जावालि के जागीरदार चन्द्रराव को शिवाजी के दमन के लिये उकसाया, परन्तु शिवाजी ने श्यामराजे को ससैन्य मार कर भगा दिया और चन्द्रराव का

कंटक काट कर जावालि पर अपना अधिकार कर लिया। फिर रोहिरा के दुर्गाध्यक्ष बन्दल पर विजय प्राप्त कर उसके वीर सेनापति बाजी प्रभुदेश पांड़े को अपना मित्र बनाया। इस समय शिवाजी ने कृष्णा तट के विशाल शैल-शिखर पर एक और क़िला बनवा कर उसका नाम 'प्रतापगढ़' रक्खा। इन विजयों से शिवाजी की शासन-सीमा और भी अधिक बढ़ गई। अकबर, शाहजहाँ, जहांगीर और औरंगज़ेब ने दक्षिण की प्राय: समस्त शक्तियों को नष्ट कर दिया था; चारों ओर "त्राहि, त्राहि" मची हुई थी, अहमद-नगर का गर्व मिट्टी में मिल चुका था, गुजरात-नरेश बहादुरशाह नष्ट-भ्रष्ट हो चुका था, गोलकुण्डा सर किया जा चुका था, कल्याणी और कुलबर्गा मुग़ल साम्राज्य के अंग बन चुके थे। उधर दिल्ली के सिंहासन के लिये शाहजहां के बेटों में मन-मुटाव पड़ा हुआ था। बीजापुर पर औरंगज़ेब ने आक्रमण कर रक्खा था। ऐसे समय में वीरवर शिवाजी ने मुग़लों के जुन्हार दुर्ग पर आक्रमण किया। दुर्ग वासियों को महाराष्ट्र सेना ने घेर लिया और खूब लूट-मार मचाई, बहुतसा धन मिला। फिर टींढ़ा पर आक्रमण किया। यहां से भी बहुत सी सामग्री प्राप्त हुई, इतना करने के बाद शिवाजी पूना लौट गये और वहां सैन्य-संग्रह करने लगे।

इस समय औरंगज़ेब अपने भाइयों को मार कर और पिता को क़ैद करके दिल्ली के तख़्त पर बैठ चुका था। बीजापुर दरबार ने औरंगज़ेब से संधि करली। शिवाजी ने भी राजनैतिक कूटनीति से प्रेरित होकर औरंगज़ेब के साथ अपने को सन्धि-सूत्र में बांध लिया। सुलह होजाने पर औरंगज़ेब ने

शिवाजी को अपने दरबार में "पंजहज़ारी" मन्सब प्रदान किया। इस समय मुग़लों से लड़ाई लड़ने के कारण बीजापुर की शक्ति बहुत क्षीण हो चुकी थी। जिसके कारण अली आदिलशाह को अपनी बहुत सी सेना पृथक् करनी पड़ी थी। पृथक् की हुई अधिकांश सेना शिवाजी ने अपने यहाँ रख ली, बीजापुर में आन्तरिक झगड़े भी बहुत उठ खड़े हुए थे। उसकी इस फूट से शिवाजी को बड़ा लाभ हुआ। उन्होंने अवसर पाकर कोकणस्थ दुर्गों पर अधिकार कर लिया। इस समय बीजापुर के जागीरदार फ़तहख़ां सीदी और शिवाजी की सेना के मध्य भयंकर मुठभेड़ हुई। शिवाजी की इन सब सफलताओं को देख कर बीजापुर-नरेश भयभीत होकर बुरी तरह कुढ़ने लगा, और भरे दरबार में बड़ी उत्तेजक भाषा में उसने कहा कि, जब तक इस उद्दण्ड का दमन नहीं किया जायगा तब तक काम न चलेगा। आदिलशाह के उत्साह पूर्ण शब्द सुन कर अफ़ज़लख़ां नामक सरदार को बड़ा जोश आया और वह मूछों पर ताव देकर बड़े जोर से कहने लगा कि—'यदि मैं शिवाजी का जीवित अथवा मृतक शरीर लाकर हुज़ूर के पैरों तले न पटक दूं तो मेरा नाम अफ़ज़लख़ां नहीं।'

अफ़ज़ल ख़ां का बध

१६५९ ई० में अफ़ज़लख़ां सुसज्जित सेना लेकर शिवाजी पर चढ़ाई करने के लिए चल पड़ा। अफ़ज़लख़ां की इस चढ़ाई ने सारे महाराष्ट्र में हलचल मचादी; परन्तु इस से शिवाजी तनिक भी विचलित न हुए प्रत्युत अपने क़िलों का उचित

प्रबन्ध कर अफ़ज़लखां को रोकने के लिये प्रतापगढ़ में जा डटे। अफ़ज़लखां प्रतापगढ़ की ओर न जाकर पुरन्धर होता हुआ पंढरपुर की ओर बढ़ा चला गया और रास्ते में जितने मन्दिर मिलते गए सब को नष्ट करता गया। हिन्दुओं पर घोर अत्याचार किये, चारों ओर हाहाकार मच गया !! इन अत्याचारों के दुःखद समाचारों से शिवाजी की क्रोधाग्नि और भी अधिक प्रज्वलित हो उठी। शिवाजी ने अपनी सेना को और भी अधिक उत्तेजित कर दिया। मावले लोग अफ़ज़लखां का खून पीने के लिये बावले से दिखाई देने लगे। शिवाजी अपनी इष्टदेवी भवानी की स्तुति कर तथा माता जीजीबाई से आशीर्वाद ले रण-क्षेत्र को चल दिये। अफ़ज़लखां बराबर आतंकपूर्वक बढ़ा आ रहा था, परन्तु साथ ही उसके हृदय में यह भी द्विविधा थी कि यदि महाराष्ट्र सेना पर विजय मिल भी गया तो भी शिवाजी का हाथ आना टेढ़ी खीर है। यही सोच समझ कर अफ़ज़लख़ाँ ने शिवाजी के पास कपटपूर्ण सन्धि-संदेश लेकर अपना दूत भेजा। ख़ाँ के संधि-प्रस्ताव का शिवाजी ने समर्थन किया और अफ़ज़लखां के दूत के वापिस चले जाने पर शिवाजी ने अपना दूत उसके पास भेजा। इस प्रकार दोनों के मध्य संधि सम्बन्धी बातचीत होजाने पर निश्चित हुआ कि प्रतापगढ़ के नीचे तुंगभद्रा नदी-तट पर, अफ़ज़लखां और शिवाजी का सम्मेलन हो। शिवाजी अफ़ज़लखां से मिलने चले। दोनों की सेनाओं ने पास पास ही छावनी डाल रक्खी थीं। दोनों के साथ दो दो योद्धा थे। शिवाजी निःशङ्क होकर अफ़ज़लखां के तम्बू में चले गए। अफ़ज़लखां उन्हें आता देख उठ खड़ा हुआ

और आलिङ्गन करके उनकी गर्दन दबाने लगा। वह तलवार से वार करना ही चाहता था कि शिवाजी ने बाघनख से उसका काम तमाम कर दिया। चीख़ की आवाज़ सुनकर दोनों दलों के चारों सामन्त दौड़े और अफ़ज़लखां के शव को धरती पर छटपटाते पाया। अफ़ज़लखां की अन्तड़ियाँ पेट से बाहर निकलीं देख उसके सरदारों की आंखों से खून बरसने लगा। एक ने शिवाजी पर आक्रमण किया परन्तु थोड़ी देर में ही उसका सिर धड़ से अलग कर धरती पर गिरा दिया गया। अफ़ज़ल का सर काट लिया गया। *इस पर दोनों दलों के मध्य घोर संग्राम हुआ, परन्तु बीजापुर की सेनापति शून्य सेना मावलों के आगे न डट सकी, उसके पैर उखड़ गए, और भागती

---

* अफ़ज़लख़ाँ के वध के सम्बन्ध में भिन्न भिन्न लोगों के भिन्न भिन्न विचार हैं, कुछ की तो सम्मति है कि शिवाजी ने धार्मिक विद्वेष वश अकारण ही उसे मार दिया और कुछ यह कहते हैं कि जिस समय शिवाजी तम्बू में घुसे उस समय अफ़ज़ल ने शिवाजी के प्राण लेने के लिये वार किया, शिवाजी कब चूकने वाले थे. उन्होंने भी आत्मरक्षा करते हुए, कुशलता तथा लाघवता से उसे मार दिया। इस सम्बन्ध में ठीक ठीक मत निश्चित नहीं किया जा सकता। हां, पिछली बात पर विश्वास करने को ज़रूर जी चाहता है क्योंकि जिस समय अफ़ज़ल ख़ां बीजापुर दरबार से चले थे उस समय उन्होंने शिवाजी का जीवित या मृतक शरीर लाने की प्रतिज्ञा की थी। बहुत सम्भव है, शिवाजी को एकान्त में पाकर उसकी वही दुर्भावना जागृत हो उठी हो और उसने ऐसे अवसर पर अपने सहज शत्रु पर आक्रमण करना उचित समझा हो। ख़ां के आक्रमण करने पर आत्मरक्षार्थ शिवाजी द्वारा उसका बध अनुचित नहीं कहा जा सकता।

हुई शत्रु-सेना पर प्रहार करना बंद कर दिया गया। इस युद्ध में यवन-सेना की बहुत बड़ी हानि हुई। जिन सैनिकों ने आत्म-समर्पण कर दिया था उनके साथ शिवाजी ने ऐसा अच्छा व्यवहार किया कि वे उनके भक्त बन गये। शत्रु-सेना के भाग जाने पर शिवाजी ने अफ़ज़लखां की आदर पूर्वक अंतिम क्रिया की। इस युद्ध में शिवाजी को ६५ हाथी, ४००० घोड़े, १२०० ऊंट २०० गठरी वस्त्र, ७००००० मूल्य के सुवर्ण आदि और कितनी ही तोपें मिली थीं। इसके अतिरिक्त पन्हाल के दक्षिण का प्रदेश तथा कृष्णा के किनारे की भूमि भी उनके अधिकार में आगई। फिर क्या था चारों ओर शिवाजी की विजय-वैजयन्ती फहराने लगी, समीपवर्ती वीर लोग उनकी सेना में भरती होने लगे।

अस्तु; पवनगढ़, वसन्तगढ़, राङ्गना तथा केलिनेह को जीतकर १६५९ ई० में शिवाजी ने कोल्हापुर के क़िले को क़ाबू में किया। इस प्रकार शिवाजी का विजय-डंका बजता देख बीजापुर दरबार को चिन्ता-चुड़ैल चूसने लगी और वह रात दिन शिवाजी के दमन का उपाय सोचने लगा। उसने शिवाजी के पास संधि-सन्देश भी भेजा किंतु उसे शिवाजी ने ठुकरा दिया। इससे सुलतान के क्रोध का ठिकाना न रहा और उसने फिर शिवाजी पर आक्रमण करने की ठानी। शिवाजी ने भी युद्ध की तैयारी करदी, अपने सब क़िलों का उचित प्रबन्ध कर शिवाजी स्वयम पन्हाल दुर्ग में जा डटे। यह क़िला बहुत सुदृढ़ अधिक सुरक्षित नहीं था। आक्रमणकारी यवनसेना ने अफ़ज़लखां के लड़के फ़ाज़िलखां की अध्यक्षता में यहाँ शिवाजी को

घेर लिया। बड़ी कठिन समस्या उपस्थित हुई, विकट परिस्थिति देख वीरवर वाजीप्रभु देशपांडे ने शिवाजी को सलाह दी कि आप इस क़िले की आधी सेना लेकर सीधे राँगना चले जायँ। मैं मुसलमानी सेना को आपका पीछा करने से रोकूंगा; शिवाजी ने वाजी का यह प्रस्ताव बड़ी कठिनतासे, भवानी की शपथदिलाने पर, स्वीकार किया और वे रातको सेना सहित पन्हाल दुर्ग से चल दिये। यवनसेना शिवाजी का पीछा करने को दौड़ी परन्तु वाजीप्रभु देश-पांडे और महाराष्ट्र सेना ने यवन-दल को रोक लिया। इस कार्य में वीरवाजी के शरीर में इतने घाव होगए थे कि उनसे रक्त के फ़ब्बारे छूट रहे थे। शिवाजी अभीष्ट स्थान पर सकुशल पहुँच गए; यह जान कर वाजी प्रभु को बड़ी प्रसन्नता हुई। परन्तु रक्त की धारा बहने से उनका शरीर बहुत ही निर्बल हो गया था और अन्त को यह महावीर संसार में स्वामिभक्ति और वीरता का ज्वलन्त उदाहरण उपस्थित करता हुआ पृथ्वी पर गिर पड़ा और स्वर्ग सिधारा।

पिता-पुत्र सम्मेलन

अन्त में १६६१ ई० में स्वयं बीजापुर के सुल्तान ने शिवाजी पर चढ़ाई की। शिवाजी ने अपनी सेना की द्रुतगति द्वारा शत्रु के दाँए-बाँए आक्रमण करने शुरू किये और रसद तथा युद्धोपयोगी सामग्री का यवन-सेना तक जाना बन्द कर दिया। इस युद्ध में शिवाजी के कितने ही क़िले और जागीरें बीजापुर के पल्ले पड़े। परन्तु उनके रणकौशल की धाक शत्रु के हृदय पर

अच्छी तरह बैठ गई। इसी सिलसिले में शिवाजी ने अपने पिता शाहजी को धोखे से क़ैद करने वाले वाजी घोरपड़े का भी काम तमाम कर दिया! इस कार्य से शाहजी को बहुत प्रसन्नता हुई, और उन्होंने अपने पुत्र शिवाजी से मिलना चाहा। कहते हैं कि पिता के आने की ख़बर पाकर, उनसे मिलने के लिये शिवाजी १२ मील तक नंगे पाँव चले गये। इतने दिनों बाद पिता-पुत्र का यह सम्मेलन अपूर्व था। दोनों की आंखों से आनन्दाश्रु बरस रहे थे। पुत्र ने पिता को चरण स्पर्शपूर्वक, गद्दी पर बिठाया। शाहजी कुछ दिनों शिवाजी के पास रहकर फिर कर्नाटक चले गए। उधर बीजापुर के सुल्तान ने तंग आकर शिवाजी से संधि करली। उसने संधि के अनुसार कल्याण से गोवा तक कोंकण प्रदेश तथा भीमा से वारधा तक घाटमाला प्रदेश पर शिवाजी का अधिकार स्वीकार किया। इस समय शिवाजी के पास पाँच हज़ार पैदल सेना तथा सात हज़ार सवार थे।

मुग़लों से मुठभेड़

अब तक शिवाजी ने जूनागढ़ की लूट-मार के अतिरिक्त मुग़लोंके अन्य प्रदेशों पर आक्रमण न किया था। पर मुग़ल शासक उनकी सब गति-विधियों को बड़ी ईर्ष्या की दृष्टि से देख रहे थे, मुग़ल सेना ने कल्याण पर धावा किया, शिवाजी ने भी उससे युद्ध करने की तैयारी करदी और जूनार से उत्तरस्थ दुर्गों पर अपना अधिकार जमा लिया। इधर औरंगज़ेब के दक्षिणी

सूबेदार शायस्ताखां ने पूना और चाकन पर अपना झंडा गाड़ दिया, और वह उसी क़िले में रहने लगा जिसमें शिवाजी ने बाल्यकाल व्यतीत किया था। शिवाजी इस समय 'सिंहगढ़' में थे। वे शायस्ताख़ां की इस करतूत से बहुत क्रुद्ध हुए। शायस्ताख़ां की सहायता के लिये दिल्ली से मारवाड़ केसरी यशवंतसिंह भी सेना सहित आये थे।

एक दिन शिवाजी वेश बदल कर इस नरेश से मिले और हिन्दुत्व तथा क्षात्र धर्म की अपील करते हुए उनसे इस युद्ध में पूना से दूर रहने को कहा। जब यशवन्त सिंह ने शिवाजी की बात स्वीकार करली तो उन्होंने कहा कि मैं ही शिवाजी हूँ। इस पर यशवन्त सिंह ने प्रसन्न होकर उन्हें छाती से लगा लिया। फिर शिवाजी सिंहगढ़ को चले गए। अब शिवाजी ने कार्यसिद्धि का एक अद्भुत उपाय सोचा। वे पच्चीस सरदारों सहित पूना को जाती हुई एक बारात में हिल-मिल कर रात्रि के घोर अंधकार में शायस्ताख़ां के निवास-स्थान क़िले तक पहुँच गए। सिंहगढ़ से लेकर पूने तक अपनी सेना उन्होंने पहिले ही छिपा दी थी। बारात तो क़िले के नीचे होकर निकल गई परन्तु शिवाजी अपने साथियों सहित वहीं ठिठक रहे और घोर रात्रि होने पर कमन्द द्वारा क़िले के उस कमरे पर चढ़ गए जिसमें शायस्ताख़ां सपरिवार सो रहा था। इनके घुसते ही सारे क़िले में हाहाकार मच गया। शायस्ताख़ाँ मावलों को देखकर बावलों की तरह इधर उधर भागने लगा और अन्त को उसने एक खिड़कीसे कूद कर प्राण बचाये। शिवाजीके वारसे शायस्ताख़ाँ के

हाथ की दो उंगलियां कट गयी थीं। मावले लोगों ने क़िले के पहरेदारों तथा अन्य रक्षकों के रक्त की धारा बहादी। क़िले में सर्वत्र नरमुण्ड ही नरमुण्ड दिखाई देने लगे। अंत में शिवाजी की आज्ञा से यह जनसंहार बन्द किया गया। बचे हुए मुसलमान निकाल दिये गए। शिवाजी अपने प्यारे क़िले को पाकर परम प्रसन्न हुए। इस विजय से शिवाजी की ख्याति बहुत ज़्यादा होगयी और अब उन्होंने औरंगज़ेब के अधिकृत किये स्थानों पर अपना अधिकार जमाना प्रारम्भ किया।

१६६४ ई० में तत्कालीन वाणिज्य-व्यवसाय के केन्द्र सूरत पर चार हज़ार सवार लेकर शिवाजी ने हमला कर दिया। छै दिनों तक नगरनिवासियों तथा मक्का के यात्रियों को लूट कर शिवाजी वहाँ से लौट आए। सुप्रबन्ध के कारण अंगरेज़ी कोठियां लुटने से बच गईं। थोड़े दिन बाद शिवाजी ने फिर सूरत पर धावा कर लूट-मार की। अंगरेज़ी कोठियाँ इस बार भी सुरक्षित रहीं। पहली बार सूरत से लौटते समय शाहजी का देहान्त हो चुका था। शाहजी ने मरते समय बंगलौर के पास कितनी ही जागीरें छोड़ीं जो शिवानी को मिलीं।

मुग़लों से सन्धि

पूना के क़िले से बाहर निकाल दिये जाने की ख़बर पाकर औरंगज़ेब ने क्रोध से अधीर होकर शायस्ताख़ाँ को डाट बताई और उसे पदच्युत कर दिल्ली बुला लिया और उसके बदले में अपने बेटे मुअज़्ज़म को दक्षिण का सूबेदार बना कर

भेजा, पीछे से यशवन्त सिंह भी उसकी रक्षा के लिये रवाना किये गए। परन्तु इन दोनों को सफल होते न देख आमेर नरेश राजा जयसिंह को दलबल सहित पूना भेजा। इन्होंने पुरन्धर, सिंहगढ़ और रायगढ़ क़िलों को घेर लिया। शिवाजी बड़े असमञ्जस में पड़े। उन्हें हिन्दुओं पर प्रहार करना कदापि अभीष्ट न था। दूसरे मुग़लों की शक्ति भी बहुत ज़्यादा थी। कई दिनों तक युद्ध हुआ और शिवाजी के कितने ही क़िले मुग़लों के क़ब्ज़े में चले गए। अन्त को शिवाजी ने मुग़लों से सन्धि करली जिसके अनुसार मुग़लों के जीते हुए क़िले उन्हें वापिस करने पड़े। शिवाजी के ३२ क़िलों में से २० औरंगज़ेब ने लिए और बाक़ी १२ उनके पास जागीर के रूप में छोड़ दिये। शिवाजी ने औरंगज़ेब को जो प्रदेश दिये थे उनके बदले में उन्हें बीजापुर के कुछ प्रदेश मिले और साथ ही शिवाजी के पुत्र शंभाजी को 'पंज हज़ारी' मंसवदार बनाया गया।

उपर्युक्त संधिपत्र पर हस्ताक्षर होने के अनन्तर जयसिंह ने बीजापुर पर धावा किया। शिवाजी उनके सहायक हुए। दोनों ने मिल कर थोड़े ही दिनों में बीजापुर के कई किलों पर क़ाबू कर लिया। इसके बाद शिवाजी के हृदय में सुप्रसिद्ध 'रुद्रमण्डल' नामक दुर्गम दुर्ग के जीतने की इच्छा उत्पन्न हुई और बड़े कौशल पूर्वक वह इस महा कठिन कार्य के करने में सफल हुए। शिवाजी की इस अभूतपूर्व कृतकार्यता पर आमेर नरेश जयसिंह को बड़ा आश्चर्य हुआ और वे उनकी वीरता की भूरि भूरि प्रशंसा करने लगे।

कपट-काण्ड

जिस समय शिवाजी जयसिंह के साथ बीजापुर विजय कर रहे थे, उस समय औरंगज़ेब ने उन्हें मुग़ल-दरबार में आने के लिए निमन्त्रण भेजा। शिवाजी बुलावे को स्वीकार कर एक हज़ार पैदल सेना, पांच सौ सवार, पुत्र शंभाजी तथा कुछ अन्य मित्रों सहित आगरा की ओर रवाना हुए। आगरा में प्रवेश करते हुए शिवाजी के हृदय में प्राचीन आर्यगौरव के अनेक उच्चभाव उठते और विलीन होते थे। शिवाजी पर आतंक जमाने के लिए उस दिन आगरा खूब सजाया गया था। सारे शहर में शिवाजी के आने की ख़बर बिजली की तरह फैल गई। बहुसंख्यक नर-नारियों ने इस महावीर के दर्शनों द्वारा अपने नेत्र सफल किये। शिवाजी औरंगज़ेब के 'दीवान-आम' के पास पहुँचे, परन्तु वे वहां साधारण पुरुष की भाँति खड़े रहे। औरंगज़ेब की इस उदासीनता से उन्हें बड़ा क्रोध आया। मुलाक़ात दरबार में होने वाली थी। औरंगज़ेब अच्छी तरह जानता था कि शिवाजी झुक कर सलाम करने वाला नहीं। कहते हैं कि इसी लिये उसने राजदरबार में जाने के दरवाज़े को बहुत नीचा बनवाया था, जिससे राज-सदन में प्रवेश करते हुए शिवाजी को मजबूरन झुकना पड़े। परन्तु शिवाजी मुग़लसम्राट् की इस चालाकी को ताड़ गए और इसी लिये उन्होंने उस दरवाज़े में घुसते समय शरीर को ऐसा टेढ़ा-तिरछा बना लिया कि उन्हें सर न झुकाना पड़ा। औरंगज़ेब ने दरबार में शिवाजी की भेंट स्वीकार कर उन्हें निरादर पूर्वक 'पंज हज़ारी' सरदारों में बैठनेको कहा। इस दुर्व्यवहार से शिवाजी को बहुत ही दुःख और रोष हुआ।

ख़ैर, दरबार के बाद वे रात्रि को निर्दिष्ट स्थान में ठहराए गए, सुबह होने पर देखते हैं कि उन्हें चारों ओर से पहरेदार घेरे हुए हैं। इस समय।शिवाजी पर औरंगज़ेब की कपट कूट नीति का रहस्य प्रकट हुआ, और उन्होंने समझा कि वह क़ैद होगये ! अब शिवाजी इस वन्दीगृह से मुक्त होने की विधि सोचने लगे। उन्हें अपनी कार्यसिद्धि के लिये रोगी बनना पड़ा, सारे शहर में उनकी बीमारी की चर्चा फैल गई और यह शंका होने लगी कि यदि रोग इसी प्रकार बढ़ता गया तो शीघ्र ही शिवाजी का प्राणान्त हो जायगा। शिवाजी ने ऐसे समय में यथेष्ट दान-पुण्य किया, मनों मिठाई बाँटी। एक दिन अवसर पाकर वह और शंभाजी मिठाई की एक बड़ी झाल में बैठकर कारागृह से मुक्त हुए और साधुवेश धारण कर रायगढ़ पहुँच गए। औरंगज़ेब और सारे पहरेदार देखते ही रह गये।*

जीत पर जीत

औरंगज़ेब के नीचतापूर्ण कपटाचार के कारण शिवाजी ने उससे संधि-विच्छेद कर दिया और मुग़लों से फिर लोहा लिया। अबकी वार शिवाजी की जीत पर जीत होने लगी और कितने ही क़िले हाथ आए। मुग़ल साम्राज्य के प्रधान सहायक रण-कुशल राजा जयसिंह पहिले ही मर चुके थे, अतएव शिवाजी के

* कुछ लोगों ने शिवाजी की इस भेंट का दिल्ली में होना लिखा है जो ठीक नहीं है।

मार्ग में अब कोई रुकावट न थी। औरंगज़ेब ने यशवन्त सिंह और शाहज़ादे मुअज्जम को फिर दक्षिण की ओर भेजा पर अब की वार उन्हें कुछ भी सफलता न हुई।

आगरा से शिवाजी के इस प्रकार चतुराई पूर्वक निकल आने पर औरङ्गज़ेब को बड़ा विषाद हुआ और उसने इसे अपनी हार मान शिवाजी को स्वाधीन राजा क़रार दे दिया। कई जागीरें भी दीं, परन्तु सिंहगढ़ और पुरन्धर ये दो क़िले अभी शिवाजी को न मिल सके। इनकी प्राप्ति के लिये महराष्ट्रों नेसरतोड़ कोशिश की। औरङ्गज़ेबने शिवाजी को स्वाधीन राजा तो स्वीकार कर लिया था परन्तु उनके विरुद्ध उसके हृदय में विषैले भावों की भरमार थी। वह सदैव शिवाजी को क़ैद करने की ताक में रहता था। सिंहगढ़ बड़ा प्रसिद्ध क़िला था, इसे संधि करते समय शिवाजी ने औरङ्गज़ेब को दे दिया था, औरङ्गज़ेब समझता था कि शिवाजी दक्षिण में कितना ही विजय प्राप्त क्यों न करले परन्तु सिंहगढ़ के विना उसके सारे प्रयत्न अपूर्ण रहेंगे। सिंहगढ़ को पूर्ण रूप से सुरक्षित रखने के लिये औरङ्गज़ेब ने उदयभानु नामक एक क्षत्रिय नामधारी सर्दार को भेजा। उदयभानु ने सिंहगढ़ में आकर अपना आतंक स्थापित कर दिया, शिवाजी भी सिंहगढ़ को विजय करने के विचार में रहने लगे। इस क़िले को सर करने का काम शिवाजी के परम मित्र तानाजी ने अपने ऊपर लिया। ये अपने भाई सूर्यजी तथा बूढ़े मामा शेलार के साथ सिंहगढ़ विजय को चल दिये।

अवसर देखकर इन्होंने क़िले पर चढ़ाई की। घमसान युद्ध हुआ। वीर शिरोमणि तानाजी अपना अपूर्व पराक्रम दिखाते

हुए उदयभानु की तलवार द्वारा वीरगति को प्राप्त हुए। तानाजी की निधन-वार्ता सुन बूढ़े शेलार भी घटनास्थल पर पहुँच गए और उन्होंने अपनी तलवार से उदयभानु का काम तमाम कर दिया। इसके बाद क़िले में महाराष्ट्र सेना और मुग़ल फ़ौज के मध्य घोर लड़ाई हुई। विजयश्री ने हिन्दू वीरों का आलिङ्गन किया। जिन यवन सैनिकों ने आत्मसमर्पण कर दिया उनको अभयदान दिया गया। सिंहगढ़-विजय का शुभसंवाद पाकर शिवाजी वहां आए, परन्तु तानाजी के शव को देखकर बालकों की तरह फूट फूट कर रोने लगे। वे अपने प्यारे मित्र की लाश से चिपट गए और उस वीर के मुख-मंडल की अन्तिम झाँकी करने लगे। शिवाजी ने इस समय अत्यन्त दुःखित होकर कहा कि आज सिंहगढ़ विजय करते हुए 'गढ़' आया परन्तु सिंह (तानाजी) गया।

सिंहगढ़ जीतने के बाद शिवाजी की सेनाने और भी अभूत-पूर्व शौर्य दिखाया। पुरन्धर, माहुली, करनाला, लोहगढ़ आदि कितने ही क़िले उन्होंने अपने क़ाबू में किये। सूरत पर फिर आक्रमण किया। रास्ते में मुग़ल-सेना ने शिवाजी को घेर लिया परन्तु उस समय महाराष्ट्र सेना ने अपने अपूर्व बल द्वारा मुग़लों को मार भगाया और भी कितने ही अवसरों पर शिवाजी ने मुग़लों को ऐसा नीचा दिखाया जैसा उन्होंने पहले कभी न देखा था। सर्वत्र शिवाजी का प्रताप-मार्त्तण्ड अपनी अखण्ड आभासे प्रदीप्त हो उठा। बिदनौर, बीजापुर, गोलकुण्डा सब पर शिवाजी का सिक्का जम गया। दिल्ली में भी खलबली पड़ गई। औरंगज़ेब ने भी धाक मान ली। उत्तर में सूरत तक, दक्षिण में

विदनौर तथा हुगली तक, पूर्व में बरार, बीजापुर और गोलकुण्डा तक शिवाजी की प्रभुता स्थापित हो गई।

अभिषेक और अन्त

इस समय शिवाजी ने हिन्दूराज्य की स्थापना की और सं० १६७४ वि० के आनन्द नाम संवत् की ज्येष्ठ शुक्ला त्रयोदशी को रायगढ़ में उन का अभिषेक हुआ और उस दिन से वे छत्रपति महाराज शिवाजी भौंसले कहलाये। इस राज्याभिषेकोत्सव से शिवशक नामक शाका प्रचलित हुआ जो कोल्हापुर राजपरिवार में अब तक माना जाता है। राज्याभिषेक का कार्य काशी के पण्डित गागभट्ट ने सम्पन्न किया था, इसी समय इस क्षत्रिय नरेश को यज्ञोपवीत भी दिया गया था। कुछ लोग शिवाजी को शूद्र समझते हैं, परन्तु यह उनका भारी भ्रम है।

राजतिलक के समय विविध राज्यों से कितने ही दूत आये थे। सूरत का अंगरेज़ एलची भी सम्मिलित हुआ था। इस अवसर पर शिवाजीने अपने राज्य में अंगरेज़ोंको व्यापार करने की आज्ञा दे दी। राज्याभिषेक के बाद छत्रपति शिवाजी मुग़लों के मान-मर्दन पूर्वक निरन्तर राज्य-सीमा विस्तार करते रहे। अन्त में मुग़लों को बीजापुर छोड़ देना पड़ा। इससे कुछ काल पूर्व माता जीजीबाई स्वर्ग सिधार चुकी थीं। अन्त में शिवाजी एक भयङ्कर रोग में ग्रस्त हुए। अत्यन्त पीड़ा से उनके घोटूँ सूज गये थे। उन्हें ज्वर भी आ गया था और इस महारोग में ५ अप्रैल सन् १६८४ ई० को ५३ वर्ष की आयु में छत्रपति महाराज शिवाजी को भगवान ने

सदा-सर्वदा के लिये उठा लिया। शिवाजी ने शम्भाजी और राजाराम दो पुत्र छोड़े। मृत्यु के समय शिवाजी का राज्य-विस्तार ४०० मील में था। इस समय इनके पास ३०००० सवार और ४०००० पैदल सेना थी। २८० क़िले थे। स्थलसेना के अतिरिक्त शिवाजी के पास जलशक्ति भी बहुत काफ़ी थी। ८८ जहाज़, ५० हज़ार रणतरी, और चार पांच हज़ार समुद्री सेना उनके अधीन थी।

शिवाजी को हिन्दूधर्म-रक्षा के लिये उत्साहित करने वाले दादा कोण देव और समर्थ गुरु रामदास थे। शिवाजी को बचपन ही से हिन्दू धर्म पर अटल विश्वास था। शिवाजी नीचाति-नीच हिन्दू से भी घृणा न करते थे। उनका उद्देश्य प्रेमधर्म के आधार पर, बिखरी हुई हिन्दूजाति को एक सूत्र में आबद्ध कर उसे स्वतन्त्र बनाना था।

शिवाजी आत्मसंयमी बड़े थे, वे परस्त्रियों की ओर निगाह उठाकर भी न देखते थे। कल्याण दुर्ग पर अधिकार करते समय, एक महाराष्ट्र सर्दार ने, मुसलमान क़िलेदार की सुन्दरी कन्या को शिवाजी के सामने पेश किया। शिवाजी को अपने सैनिक की इस करतूत पर बड़ा दुःख हुआ और उन्होंने तुरन्त उस युवती को बड़े आदर के साथ उसके पिता के पास पहुंचा दिया और सैनिक को दण्ड दिया कि वह एक अबला को इस प्रकार वहां क्यों लाया?

जिस समय शिवाजी ने बिलारी दुर्ग जीता उस समय एक मलवाई देशाइन नामक विधवा उस क़िले की अधिकारिणी थी।

इसकी और शिवाजी की सेना में २७ दिनों तक युद्ध हुआ अन्त में अबला हार गयी। इस समय निराश होकर उस स्त्री ने कहा "अबलाओं पर विजय पाना वीरों का काम नहीं है" जब छत्रपति महाराज ने यह बात सुनी तो उन्होंने जीता हुआ दुर्ग तुरन्त वापिस कर दिया और उस पर फिर बिलारी की ध्वजा फहराने लगी।

शिवाजी ने जो कुछ किया हिन्दू धर्म-रक्षा के नाम पर किया। उन्होंने ब्राह्मणों और विधवाओं की रक्षा की तथा गौओं को विधर्मियों से बचाया। परन्तु किसी मस्जिद या मक़बरे की कभी अप्रतिष्ठा नहीं की। उन्होंने लोगों पर अत्याचार नहीं होने दिये और न अत्याचार किये। शिवाजी से जो एकबार प्रेम कर लेता था वह उन्हीं का हो जाता था, और उनके लिए अपने प्राणों की आहुति देने को सदैव तैयार रहता था। शिवाजी ने अपने अपूर्व बल और अकृत्रिम प्रेम, अदम्य उत्साह और अद्भुत साहस, विचित्र बुद्धिमत्ता और असीम शक्ति-सत्ता द्वारा हिन्दूधर्म की ध्वजा ऊँची की, सचमुच वह युग धन्य था जब ऐसे हिंदू-कुल-कमल-दिवाकर, वीर शिरोमणि मातृभूमि की गोद को सुशोभित कर उसका उद्धार करते थे।

महाकवि भूषण कृत

छत्रशाल-दशक

टीका–टिप्पनियों सहित

टीकाकार—

पं० हरिशङ्कर शर्मा कविरत्न आर्यमित्र–सम्पादक

सुन्दरता पूर्वक छप कर प्रकाशित हो गया।

हिन्दू धर्म रक्षक वीरवर छत्रसाल सम्बन्धी भूषण की
प्रसिद्ध-कविता का समझना,
इस पुस्तक ने बिल्कुल
आसान कर दिया।

महाकवि भूषण की वीरता पूर्ण कविता पढ़िये,
और
हिन्दू मान मर्यादा को
सुरक्षित रखने वाले वीर शिरोमणि छत्रसाल का
सुयश गाइये। मूल्य ।)

पताः—
रामप्रसाद एण्ड ब्रदर्स
बुकसेलर्स, आगरा।

श्री शिवा-बावनी

छप्पय

(१)

कौन करै बस वस्तु कौन यहि लोक बड़ो अति ?
को साहस को सिन्धु कौन रज लाज धरे मति?
को चकवा को सुखद बसै को सकल सुमन माहि ?
अष्ट सिद्धि नव निद्धि देत माँगे को सो काहि ?
जग बूझत उत्तर देत इमि, कवि भूषन कवि कुल सचिव ।
दच्छिन नरेस सरजा सुभट साहिनंद मकरंद सिव ॥

सिन्धु=समुद्र । सुमन=फूल । रज=मिट्टी । सचिव=मन्त्री । इमि=इस प्रकार। इस छन्द में कवि-कुल-सचिव (मन्त्री) भूषणजी ने संसार की ओर से पूछे हुए प्रश्नों के उत्तर अन्तिम चरण में दिये हैं। अर्थात—(१) सब वस्तुओं को कौन वश में करता है?—'दच्छिन-नरेस'(२) इस लोक में बड़ा कौन है ? (३) साहस का समुद्र अर्थात् महासाहसी कौन है ? (४) जन्मभूमि के रज की लाज कौन रखता है ?—सुभट शिरोमणि सरजाह (शिवाजी) (५)चकवा को सुख देने वाला(सूर्य समान)कौन है ? साहिनन्दन अर्थात साहजी के पुत्र(६) समस्त निर्दोष मनों या सब फूलों में बसने वाला कौन है ?—मकरन्द=पुष्परस या मालमकरन्द शिवाजी के दादा।

(७) प्रार्थना करने पर अष्टसिद्धि नवनिद्धि देने वाला कौन है?—शिव (महादेव या शिवाजी)।

नोट—चकवा या चक्रवाक एक पक्षी होता है जो सूर्यास्त से सूर्योदय तक रात भर अपनी मादा चकवी से अलग रहता है परन्तु सूरज निकलने पर उससे मिल जाता है। इसीलिये यहां शिवाजी को चकवा-चकवी का सुखदाता अर्थात् सूर्य समान कहा है।

अष्टसिद्धियां ये हैं:—अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्रकाम्य, ईशित्व और वशित्व।

नवनिधियां—महापद्म, पद्म, शङ्ख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द, नील और खर्व।

यह छप्पय या षट्पदी छन्द है, इस छन्द में ११ व १३ के विराम से ४ पाद रोला के होते हैं और १५ तथा १३ के विश्राम से दो पाद उल्लाला के होते हैं।

कवित्त—मनहरण

(२)

साजि चतुरंग वीर रंग में तुरंग चढ़ि,
सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत हैं।
'भूषन' भनत नाद विहद नगारन के,
नदी नद मद गैबरन के रलत हैं॥
ऐल फैल खैल-भैल खलक में गैल गैल,
गजन की ठेल पेल सैल उसलत है।
तारा सो तरनि धूरि धारा में लगत जिमि,
थारा पर पारा पारावार यों हलत है॥

साजि=सजा कर। चतुरंग=चतुरंगिणी सेना अर्थात् हाथी, घोड़े, रथ और पैदल। वीर रंगमें=बडी बहादुरी के साथ। तुरंग=घोड़ा। जंग=लड़ाई। सरजा=सरेजाह (फ़ारसी शब्द) शिवाजी, यह मालोजी की उपाधि थी जो उन्हें अहमदनगर के दरबार में दी गई थी। सरेजाह का अर्थ है सर्वशिरोमणि। भनत या भणत=कहते हैं। नाद=आवाज़। विहद=बेहद। गैवर*=मत्त हाथी। रलत हैं=मिल जाते हैं। नदी नद……रलत हैं=अर्थात् मत्त हाथियों के मस्तकों से इतना मद निकल रहा है कि उससे नदियां बह निकली हैं। ऐल=भीड़, कोलाहल, चीख-पुकार। फैल=फैलने से। खैल भैल=खलबली। गैल=रास्ता। गजन की……उसलत हैं=दीर्घाकार हाथियों की इतनी ठेल-पेल है कि उनके चलने से पहाड़ों के भी आसन उखड़ जाते हैं अथवा मार्ग में आये हुए पत्थर भी मिट्टी में मिल जाते हैं। तरनि=सूर्य। पारा-वार=समुद्र। तारा……हलत है=अर्थात् शिवाजी की सेना इतनी अधिक तथा प्रबल है कि उसके चलने से जो धूल आसमान में छा जाती है उसमें विशाल सूर्य साधारण तारेंई के समान झिलमिलाता रहता है। जिस प्रकार थाल में रक्खा हुआ पारा हिलता है उसी तरह शिवाजी की सेना का प्रचण्ड प्रताप देखकर असीम समुद्र डगमगायमान हो रहा है, अर्थात् जल-थल-नभ सब पर शिवाजी का अद्भुत आतंक छाया हुआ है।

यह मनहरण छन्द है, इसका प्रत्येक चरण ३१ अक्षर का होता है। साधारणतः १६ और १५ अक्षरों पर विराम होता है और अन्त का अक्षर दीर्घ होता है।

उपमालङ्कार—

*कहीं कहीं 'गब्बरन' भी पाठ भेद है जिसका अर्थ मग़रूर या घमण्डी किया गया है अर्थात् घमण्डियों का मद पानी पानी होकर नदी में मिल रहा है।

(३)

बाने फहराने घहराने घण्टा गजन के,
नाहीं ठहराने राव राने देस देस के।
नग भहराने ग्रामनगर पराने सुनि,
बाजत निसाने सिवराज जू नरेस के॥
हाथिन के हौदा उकसाने कुंभ कुंजर के,
भौन को भजाने अलि छूटे लट केस के।
दल के दरारे हुते कमठ करारे फूटे,
केरा के से पात बिहराने फन सेस के॥

बाने=झण्डे जो भालेबरदारों के भालों पर लगे रहते हैं। फहराने=उड़े। नग=पहाड़। भहराने=हड़बड़ी में गिर जाना। निसान=भूषण जी के अर्थ में नगाड़े; घोड़ों पर नगाड़े वाले जो झण्डा रखते हैं उसे निशान कहते हैं। पराने=भाग गये। कुम्भ=हाथी का सिर, घड़ा। कुञ्जर=हाथी। उकसाने=उकस गये, ढीले पड़ गये। भौन=भवन या घर। हाथिन के······लट केस के=हाथियों के हौदे उकस गये अर्थात् उनकी कसावट ढीली पड़ गई और हाथियों के मस्तक पर उड़ते हुए भौंरें अपने अपने घरों को भाग गये, क्योंकि भौंरे हाथियों के जिस मद पर भिनभिना रहे थे वह मद ही उनके मस्तक पर न रहा। शत्रु-स्त्रियों की लटें (अलकें) इधर उधर छूट पड़ीं या उनका सारा शृंगार ही बिगड़ गया। दल=सेना। दरार=धमक। कमठ=कछुआ। करारे=मजबूत। सेस=शेषनाग जो अपने ऊपर पृथ्वी का बोझ लाद रहा है। बिहराने=विदीर्ण होगये, फट गये। दल के······सेस के=शिवाजी की सेना के आतंक से पृथ्वी को धारण करने वाले शेषनाग के फनकी, केलेके कोमल पत्ते की तरह धज्जियां उड़ गयीं और शेषनाग की स्थिति जिस करारे (मज़बूत) कछुए की कमर पर है उसकी भी खील-

खील होगयी। कमठ और शेषनाग के सम्बन्ध में पुराणों में लिखा है कि पृथ्वी का भार इन्हीं दोनों के ऊपर है। भूषणजी ने इसी की ओर यहाँ संकेत किया है।

पूर्णोपमालङ्कार—

कहीं कहीं उक्त छन्द के तीसरे चरण का इस प्रकार भी पाठान्तर है:—"हाथिन के हौदा लौं कसाने कुम्भ कुञ्जर के भौन के भजाने अलि! छूटे लट केस के" अर्थात् हे अलि! (सखी) हाथियों के हौदे उनके मस्तक तक कसे रहगये, उन पर हम सवार न हो सकीं, और (भौन के भजाने) घर से भागते भागते हमारे सिर की सारी लटें खुल गईं।

(४)

प्रेतिनी पिसाचऽरु निसाचर निसाचरिहु,
मिलि मिलि आपुस में गावत बधाई हैं।
भैरौं भूत प्रेत भूरि भूधर भयंकर से,
जुत्थ जुत्थ जोगिनी जमात जुरि आई हैं॥
किलकि किलकि कै कुतूहल करति काली,
डिम डिम डमरू दिगम्बर बजाई है।
सिवा पूँछै सिव सों समाज आजु कहाँ चली,
काहू पै सिवा नरेस भृकुटी चढ़ाई है॥

भूरि=बहुत। भूधर=पहाड़। जुत्थ=समुदाय। जमात=संघ, भुण्ड। दिगम्बर=महादेव। डिमडिम=डमरू बजने का शब्द। डमरू=एक बाजा। भृकुटी चढ़ाई है=क्रोध किया है। कुतूहल=तमाशा। शिवा=पार्वती। सिव=महादेव।

शिवाजी के युद्ध-घोषणा करते ही प्रेतिनी, पिशाच राक्षस-राक्षसी, भैरव-भूत, काली आदि आनन्द से उछल रहे हैं अर्थात् यह सब समझते हैं कि अब शिवराज रण-भूमि में पहुँच कर इतना नरसंहार करेंगे कि हम बड़े मज़े में—खूब आनन्द के साथ, मुर्दों को खाकर और उनका खून पीकर तृप्त हो सकेंगे। भगवान् भूतनाथ इसलिये डिमडिम डमरू बजा रहे हैं कि उनकी मुण्डमाला के लिये अब और कितने ही मुण्ड (सिर) मिल जायंगे। इससे शिवाजी की रण-भयङ्करता का कुछ अनुमान किया जा सकता है।

अप्रस्तुत प्रशंसा अलंकार—

(५)

बद्दल न होंहिं दल दच्छिन घमंड माँहिं,
घटा हू न होहिं दल सिवाजी हँकारी के।
दामिनी दमंक नाहिं खुले खग्ग वीरन के,
वीर सिर छाप लखु तीजा असवारी के॥
देखि देखि मुगलों की हरमैं भवन त्यागैं,
उझकि उझकि उठैं बहत बयारी के।
दिल्ली मति भूली कहैं बात घन घोर घोर,
बाजत नगारे जे सितारे गढ़ धारी के॥

बद्दल=बादल। हँकारी=घमण्डी, अहंकारी। दामिनी=बिजली। दमक-चमक। खग्ग=खड्ग-खाँड़ा, तलवार। सिरछाप=साफ़े के सामने की ओर वीर सिपाही भाँति भाँति के सुन्दर चमकदार चिह्न लगा लेते हैं। तीजा असवारी=तीज की असवारी, राजपूताने में हरता

तीज को राजाओं की सवारी बड़े समारोहपूर्वक निकलती है। दामिनी दमंक……असवारी के=बिजली की दमक देखकर यह कल्पना होती है कि वह बिजली की चमक नहीं बल्कि तलवारें कौंधा मार रही हैं, तीजा की सवारी के वीरों के सरपेचों की चमकीली छाप अपना चमत्कार दिखा रही हैं। हरम=स्त्रियाँ। बयारी=हवा। मति भूली=भ्रम में पड़ी। दिल्ली मत भूली=दिल्ली वालों की अक़्ल मारी गयी है। सितारेगढ़ धारी=सितारे के क़िले का स्वामी, शिवाजी।

शिवाजी का शत्रुओं पर कितना अधिक आतङ्क है कि वह गरजते हुए बादलों और कड़कती हुई बिजली को, भय एवम् भ्रम से, शिवाजी की सेना समझ लेते हैं। यहाँ तक कि हवा के झोंकों की आवाज़ सुनकर मुग़ल-स्त्रियाँ, रात में झिझक झिझक कर, इस महल से उसमें और उससे उसमें भागती फिरती हैं। पत्ता खड़का कि शत्रुओं को शिवाजी की सेना के तोप दाग़ने का सन्देह हुआ!

शुद्धापह्नुति अलङ्कार—

(६)

बाजि गजराज सिवराज सैन साजत ही,
दिल्ली दिलगीर दसा दीरघ दुखन की।
तनियाँ न तिलक सुथनियाँ पगानियाँ न,
घामैं घुमराती छोड़ि सेजियाँ सुखन की॥
'भूषन' भनत पति बाँह बहियाँन तेऊ,
छहियाँ छबीली ताकि रहियाँ रुखन की।
बालियाँ बिथुरि जिमि आलियाँ नलिन पर,
लालियाँ मलिन मुगलानियाँ मुखन की॥

बाजि=घोड़ा। गजराज=बड़े बड़े हाथी। दिलगीर=(फ़ारसी) दुखी, रंजीदा। तनियाँ=चोली। तिलक=(तिरलीक़) एक तरह का ढीला ढाला कुरता; बीकानेर की कुँजड़ियाँ अब तक तिलक पहनती हैं। पगनियाँ=पगों में पहनने की जूतियाँ, पन्हइयाँ। सुथनियाँ=पायजामा। घामैं=घाम में, धूप में। घुमरात=घबरा कर भागती फिरती हैं। रूख=पेड़। पतिबांह······रुखन की=जिन नवेली अलबेलियों को अभी पति की भुजाओं से लिपटने का सौभाग्य भी प्राप्त नहीं हुआ अथवा जो पतियों की बाहों से कभी (बहियाँ) बही या अलग नहीं हुई वे नवोढायें तक घर-महल तथा सुख-सेज छोड़कर पेड़ों की छाया में जान छिपाती फिरती हैं। आलियाँ (अलियाँ)=भौरियाँ। नलिन=कमल। लालियाँ=सुर्ख़ी, सुन्दरता। बालियां······मुखन की=मुग़लों की स्त्रियाँ ऐसी व्याकुल हो रही हैं कि उन्हें अपने सिरों के बालों को गुँथवाने तक का मौक़ा नहीं मिलता। उनके मुख-मण्डल पर ये काली लटें उसी प्रकार लटक रही हैं जिस प्रकार भौरियाँ कमल पर भिनभिनाया करती हैं। डर के मारे चहरों पर लालिमा तो दिखायी ही नहीं देती। सुरक्षित तथा सुदृढ़ स्थानों में रहने वाली शत्रुस्त्रियों का ऐसा बुरा हाल है!

उपमालंकार—

(७)

कत्ता की कराकनि चकत्ता को कटक काटि,
कीन्हीं सिवराज वीर अकह कहानियाँ।
'भूषन' भनत तिहुँ लोक में तिहारी धाक,
दिल्ली औ बिलाइति सकल बिललानियाँ॥
आगरे अगारन ह्वै फाँदती कगारन छ्वै,
बाँधती न बारन मुखन कुम्हिलानियाँ।
कीबी कहैं कहा औ गरीबी गहै भागी जाहिं,
बीबी गहैं सूनथी सु नीवी गहै रानियाँ॥

कत्ता=खाँड़ा, तलवार । कराकनि=कड़ाका, मार चोट । चकत्ता=(चुग़ताई वंश) औरंगज़ेब । कटक=सेना । अकह=अकथनीय । धाक=दवदबा । विलाइत=विदेश । विललानियाँ=व्याकुल होगयीं । अगारन=महल, घर । कगारन=मुंडेली । कीवी=करेंगी । नींवी=नाभि के नीचे धोती का बंधन या लहंगे अथवा पायजामे के कमरवन्द की सरकफूंद ।

शिवाजी की तलवार के आतङ्क से शत्रुओं (जिनमें मुसलमान और हिन्दू दोनों शामिल हैं) की स्त्रियां प्राण बचाने के विचार से, छतों को फांद कर भागी जारही हैं, उन्हें तन-बदन का कुछ भी होश नहीं है । बाल बिखरे हुए हैं, कपड़े भी अच्छी तरह नहीं पहन सकी हैं । ऐसी व्याकुलता में उनसे अपने बचाव के लिये जो कुछ बनता है, कर रही हैं ।

अनुप्रास अलङ्कार—

(८)

ऊँचे घोर मंदर के अन्दर रहन वारी,
ऊँचे घोर मंदर के अन्दर रहाती हैं ।
कंद मूल भोग करैं कन्द मूल भोग करैं,
तीनि बेर खातीं सो तो तीनि बेर खाती हैं ॥
भूषन सिथिल अंग भूषन सिथिल अंग,
बिजन डुलातीं तेव बिजन डुलाती हैं ।
'भूषन' भनत सिवराज वीर तेरे त्रास,
नगन जड़ातीं तेव नगन जड़ाती हैं ॥

मन्दर (मन्दिर)=महल, मकान । मन्दर=(मन्दराचल) पहाड़ । कंद-मूल=ऐसे व्यंजन जिनमें क़न्द (मीठा) पड़ा हो, या शकरकन्द, ज़मीकन्द

आदि वर्ग के मूल। कन्दमूल=जड़ें, ज़मीन के अन्दर होने वाले फल। तीनिबेर=तीन दफ़ा। तीनि बेर=तीन बेर (फल)। भूषन=ज़ेवर। भूषन=(भूखन) भूख से। बिजन=बीजना, पंखा। बिजन=बिना आदमियों के, अकेली। तेव=ते (वह) अब। डुलाती हैं=मारी मारी फिरती हैं। त्रास=भय। नगन जड़ातीं=ज़ेवरों में नग जड़ाती थीं। नगन जड़ाती हैं=नंगी जाड़े मरती हैं।

जो स्त्रियां महलों में रहती थीं आज वे अपनी जान बचाने के लिये पहाड़ों की गुफ़ाओं में मारी मारी फिरती हैं। फल-फलारी या स्वादिष्ट मिठाई के अभाव में घास-पात खाकर ही पेट भर लेती हैं। दिन में बार बार सरस भोजन तो कहाँ अगर एक आध बार दो चार बेर भी मिल जाते हैं तो उन्हें ही वे ग़नीमत समझ कर बड़े चाव से खाती हैं। भूषणों में नग जड़ाने की तो बात ही क्या अब तो जाड़े में शरीर ढकने के लिए चिथड़े तक मयस्सर नहीं हैं।

यमक अलङ्कार—

(९)

उतरि पलँग ते न दियो है धरा पै पग,
तेऊ सग बग निसि दिन चली जाती हैं।
अति अकुलातीं मुरझातीं न छिपातीं गात,
बात ना सोहातीं बोलैं अति अनखाती हैं।
'भूषन' भनत सिंह साहि के सपूत सिवा,
तेरी धाक सुने अरि नारी बिललातीं हैं।
कोऊ करैं घाती कोऊ रातीं पीटि छाती धरैं,
तीनि बेर खातीं ते वै बीनि बेर खाती हैं॥

धरा=धरती। गात=गात्र, शरीर। सगबग=सभय, डर के मारे। अनखाती=नाराज़ होती हैं। घाती=आत्मघात। बेर=बार, मर्तबा। बेर=फल।

जिन बेगमों ने कभी सुखसेज से उतर कर धरती पर पाँव भी नहीं रक्खा था आज वे महावीर शिवराज की धाक से व्याकुल होकर तनछीन, मनमलीन अवस्था में इधर उधर मारी मारी फिरती हैं। कोई रोती है, कोई छाती पीटती है और कोई आत्म-घात तक करने को तय्यार हो जाती है। ऐसे संकटकाल में न कोई बात का पुछैया है न धीर का धरैया।

उपमा, अनुप्रास और यमक अलङ्कार—

(१०)

अन्दर ते निकसीं न मन्दिर को देख्यो द्वार,
बिनरथ पथ ते उघारे पाँव जाती हैं।
हवा हू न लागती ते हवा ते विहाल भईं,
लाखन की भीरि में सम्हारतीं न छाती हैं॥
'भूषन' भनत सिवराज तेरी धाक सुनि,
हयादारी चीर फारि मन झुँझलाती हैं।
ऐसी परीं नरम हरम बादसाहन की,
नासपाती खातीं ते बनासपाती खाती हैं॥

विहाल=विकल। हयादारी चीरफार=लज्जालुता का पट फाड़कर अर्थात् निर्लज्जता से। नरम=कोमल, सीधी साधी। हरम=बेगमें।

जिन बेगमों ने कभी अपने महलों के द्वार तक न देखे थे, हमेशा परदे में ही रहती थीं, यहां तक कि बाहर की हवा भी

उन्हें न लग सकती थी, आज वे शिवराज महाराज के आतङ्क के कारण निर्लज्ज तथा दुखी होकर, भयङ्कर आंधी में, इधर उधर भागी फिरती हैं। जो बेगमें क़ीमती फलों की टोकरियों को ठोकर से ठुकरा देती थीं अब उन्हें पेट भरने के लिये घास-पात भी नहीं मिलते !

इस छन्द में 'नासपाती' और 'बनासपाती' अनुप्रास के लिये लाई गई हैं, वस्तुतः नाशपाती कोई ऐसा बढ़िया फल नहीं होता जो बेगमों के लिए न्यामत हो। सम्भव है कि मुग़लों की बेगमें इस फल को बड़ी रुचि से खाती हों, क्योंकि भूषणजी ने कई बार इन छन्दों में उसका उल्लेख किया है।

अनुप्रास और यमक अलंकार—

(११)

अतर गुलाब रसचोबा घनसार सब,
सहज सुबास की सुरति बिसराती हैं।
पल भरि पलँग ते भूमि न धरति पाँव,
भूलीं खान पान फिरैं बन बिललाती हैं॥
'भूषन' भनत सिवराज तेरी धाक सुनि,
दारा हार बार न सम्हारें अकुलाती हैं।
ऐसी परी नरम हरम बादसाहन की,
नासपाती खातीं ते बनासपाती खाती हैं॥

चोबारस=चोबा, केसर, कस्तूरी आदि चुआकर बनी हुई खुशबू। घनसार=कपूर। दारा=स्त्रियां। हार बार न सम्हारें=गले के हार तथा सिर के बालों को नहीं सम्हालतीं।

जहां मारे डर के खाना-पीना, सोना-हँसना तथा सब सुख सामग्रियाँ त्याग कर, वन वन भटकने की नौबत आगई हो वहाँ तेल-फुलेल की क्या चलती है ! अरे साहब ! कैसा चोबा और कहाँ की सुगन्ध ! पहले इस भयङ्कर संकट से तो किसी तरह जान बचे, यह रंग-रलियां तो पीछे की बातें हैं।

यमक अलंकार—

(१२)

सोंधे को अधार किसमिस जिनको अहार,
चारि को सो अंक लंक चन्द सरमाती हैं।
ऐसी अरिनारी सिवराज वीर तेरे त्रास,
पायन में छाले परे कंद मूल खाती हैं॥
ग्रीषम तपनि एती तपती न सुनी कान,
कंज कैसी कली बिनु पानी मुरझाती हैं।
तोरि तोरि आछे से पिछौरा सों निचोरि मुख,
कहैं अब कहाँ पानी मुकतौं में पाती हैं॥

सौंधे = सौंधे वा सलोने भोजन। कंज=कमल। पिछौरा=ओढ़ना, चादर। मुक्ता=मोती। लंक=कमर। चार······सरमाती हैं=अर्थात चार कैसे अंक की पतली कमर वाली शत्रुस्त्रियाँ अपने सुन्दर मुखमण्डल की अपूर्व आभा से द्वितीया के चन्द्रबिम्ब को भी लज्जित करती हैं, क्योंकि चलने में उनकी कमर लचक कर कमान बन जाती है जैसा कि दौज का चन्द्रमा होता है। चार ४ का अंक देखिये, इसमें जो ऊपर की ओर सन्धि हुई है वह कितनी बारीक है। इसी उपमा को लक्ष्य में रख भूषण जी ने शत्रुस्त्रियों की कमर के पतलेपन की प्रशंसा की है। स्त्रियाँ क्षीण-

मध्या कही जाती हैं। अर्थात् बीच में उनकी कमर का स्थान नीचा और नितम्ब तथा वक्षःस्थल उठे हुए। यह बात चार के अंक से भली भाँति प्रकट है, इसमें ऊपर की ओर इधर उधर के शोशे उठे हुए हैं, परन्तु बीच की जगह खाली सी दिखायी देती है। सम्भवतः यही समझ कर भूषणजी ने चार का अंक कमर की उपमा के लिये उपयुक्त समझा है।

फूल सूंघ कर, या सलोने भोजन करके अथवा मेवा चुग कर जीने वाली परम सुन्दरी शत्रुस्त्रियों के दुःख का भला कुछ ठिकाना है! बेचारी मारी मारी फिरती हैं, चलते चलते पाँवों में छाले पड़ गये हैं, घास-पात खाकर बड़ी कठिनाई से उदर-दरी भर रही हैं, मारे प्यास के दम निकला जाता है। जिस प्रकार पानी की कमी के कारण कमल-कली कुम्हला जाती है, उसी प्रकार यह चन्द्रमा को लजाने वाली कोमलाङ्गिनी सुन्दरियाँ ग्रीष्म की भभकती हुई भट्टी में भुन रही हैं। प्यास से इतनी घबरा रही हैं कि वे अपनी बढ़िया चादरों से मूल्यवान मोतियों को फोड़ फोड़ कर, भ्रम वश उन्हें मुंह की ओर ले जाती हैं, परन्तु उनमें पानी नहीं मिलता। उफ़! आज ऐसे सङ्कट में इन आबदार मोतियों में भी आब नहीं दिखाई देता। अरे मोतियो! तुमतो पानीदार कहे जाते थे परन्तु अब सङ्कट में ही हमारी मदद न करोगे तो कब काम आओगे? जब हम प्यासी मर गयीं तो तुम्हारी आबदारी को लेकर क्या करोगे?

(१३)

साहि सिरताज औ सिपाहिन में पातसाह,
अचल सु सिंधु केसे जिनके सुभाव हैं।
'भूषन' भनत परी सस्त्र रन सिवा धाक,
काँपत रहत न गहत चित चाव हैं॥

अथह विमल जल कालिन्दी के तट केते,
परे युद्ध विपाति के मारे उमराव हैं।
नाव भरि बेगम उतारैं बाँदी डोंगा भरि,
मक्का मिस साह उतरत दरियाव है ॥

सिन्धु=समुद्र । अथह=अथाह । विमल=साफ़ । चाव=उत्साह । कालिन्दी=यमुना । मिस=बहाना । मक्का=मुसलमानों का तीर्थस्थान । सेवा=शिवाजी ।

सेनापति और सरदार तो क्या खुद बादशाह औरंगज़ेब तक अपनी धीरता तथा गम्भीरता त्याग कर, शिवाजी के आतङ्क से कम्पायमान हो रहे हैं। कितने ही सरदार तो मारे डर के जान छिपाये, यमुना किनारे छिपे पड़े हैं। और कोई चारा चलता न देख, बादशाह अपनी बेगमों और बाँदियों को नावों तथा डोंगियों में भर कर, मक्का यात्रा के बहाने से नदी पार करना चाहते हैं

पर्यायोक्ति अलंकार—

(१४)

किबले के ठौर बाप बादसाह साहिजहाँ,
ताको कैद कियो मानो मक्के आगि लाई है।
बड़ो भाई दारा वाको पकरि के कैद कियो,
मेहेरहु नाँहिं माको जायो सगो भाई है ॥
बन्धु तौ मुरादबक्स बादि चूक करिबे को,
बीच दै कुरान खुदा की कसम खाई है।
'भूषन' सुकवि कहै सुनो नवरंगजेब,
एते काम कीन्हे फिरि पातसाही पाई है ॥

क़िबला = ध्रुव, पूज्य, बड़ा, मुसलमानों का पूज्य स्थान, पश्चिम दिशा। ठौर = स्थान, समान। मक्का = मुसलमानों का तीर्थ। आगि लाई है = भस्म कर दिया है, आग लगादी है। नवरंगजेब = औरंगज़ेब। चूक = विश्वासघात। मेहेरहु = महरबानी भी।

औरंगज़ेब! तुमने अपने पूज्य पिता शाहजहाँ को क़ैद कर वह अक्षम्य अपराध किया है जो मक्के में आग लगाने से होता है। सहोदर भाई दारा को जेल में ठेल कर तुमने प्रियबन्धु मुराद को विश्वासघात पूर्वक मारने में ख़ुदा का भी ख़ौफ़ न किया और फिर भी तुम ऐंठ के साथ अपने को बादशाह कहते हो। लानत है तुम पर और तुम्हारी बादशाहत पर। क्या पूज्य पिता और प्रिय भाइयों के साथ ऐसा घोर घृणित व्यवहार करना ही तुमने बादशाही समझ रक्खा है?

उत्प्रेक्षालंकार—

(१५)

हाथ तसबीह लिए प्रात उठै बंदगी को,
आप ही कपट रूप कपट सुजप के।
आगरे में जाय दारा चौक में चुनाय लीन्हों,
छत्र हू छिनायो मनों मरे बूढ़े बप के॥
कीन्हों है सगोत घात सो मैं नाहिं कहौं फेरि,
पील पै तुरायो चार चुगुल के गप के।
'भूषन' भनत छरछंदी मतिमंद महा,
सौ सौ चूहे खाय कै बिलारी बैठी तप के॥

तसबीह = माला। बन्दगी = ईश्वर-प्रार्थना। बप = बाप। सगोत = अपने गोत्र का। पील पै तोरायो=हाथी (फील) से मरवा डाला। चार=दूत। चुग़ल = चुग़लख़ोर। गप = गप मारना, झूठ बोलना। सौ सौ······तप कै = यह मुहाविरा है, अर्थात् बड़े बड़े पाप करने के बाद अब भला बनने की सूझी है।

हज़रत औरङ्गज़ेब ! क्यों कहलाते हो ? आपके काले कारनामे हमें अच्छी तरह मालूम हैं। तुम सवेरे हाथ में माला लेकर व्यर्थ ही सटासट्ट करते हो। कौन नहीं जानता कि तुमने अपने भाई दारा को दीवार में चुनवाकर वह जघन्य काम किया जिसके लिये तुम पर हमेशा लानत पड़ती रहेगी। अरे बूढ़े बाप को मरा मान कर स्वार्थान्धता से ख़ुद सल्तनत करना अनधिकार चेष्टा की चरमसीमा नहीं तो क्या है ? तुमने अपने बुद्धि-विवेक को तिलाञ्जलि दे, चुग़लों की बात मानकर न जाने कितने कुटुम्बियों को हाथियों द्वारा नष्ट करा दिया ! ऐसी नीचता पूर्ण ओछी करतूत और फिर सौजन्य का दम्भ ! अपने को दूध का धुला कहने का साहस। घोर पाप करने के पश्चात् अब इस माला की गटागट्ट से क्या हो जायगा। तुम्हें देखकर दुनिया यही कहेगी न कि देखो—सौ सौ चूहे खाकर बिल्ली अब हज जाने की तय्यारी कर रही है।

छेकोक्ति अलङ्कार—

(१६)

कैयक हजार जहाँ गुर्जबरदार ठाड़े,
करि कै हुस्यार नीति पकरि समाज की।

राजा जसवंत को बुलाय के निकट राखे,
तेऊ लखै नीरे जिन्हैं लाज स्वामि-काज की ॥
'भूषन' तबहुँ ठठकत ही गुसुलखाने,
सिंह लौं झपट गुनि साहि महाराज की।
हटकि हथ्यार फड़ बाँधि उमरावन को,
कीन्हीं तब नौरंग ने भेंट सिवराज की ॥

कैयक = कई एक, कितने ही । गुर्जबरदार = गदाधर, गदा ले चलने वाले । नीरे = निकट । नीति पकरि समाज की = राजदरबार की प्रथा के अनुसार । गुसलख़ाना = नहाने की जगह, स्नानागार । ठिठकना = डरना, संकोच करना ।

सन् १६६६ की घटना है, जिस समय शिवाजी औरङ्गज़ेब से मिले उस समय औरङ्गज़ेब के भय का ठिकाना न था। उसने मारे ख़ौफ़ के अपने हज़ारों गुर्जबरदार इकट्ठे कर लिये थे । जोधपुर-नरेश जसबन्त सिंह को भी बुलाकर अपने पास बिठा लिया था। और भी जो वफ़ादार लोग थे वे सब भी वहां हाज़िर किये गये थे। इतना तो इन्तज़ाम फिर भी औरङ्गज़ेब के डर का ठिकाना नहीं। या ख़ुदा ! कहीं ऐसा न हो कि शिवाजी शेर की तरह मेरे ऊपर अचानक आक्रमण कर बैठे। ऐसी हालत में औरङ्गज़ेब ने स्नानागार में ठिठक कर हथियारों की रोक के साथ, इधर उधर अपने सर्दारों को खड़ा करके तब शिवाजी से मुलाक़ात की।

(१७)

सवन के ऊपर ही ठाढ़ो रहिवे के जोग,
ताहि खरो कियो जाय जारिन के नियरे ।

जानि गैरमिसिल गुसैल गुसा धारि उर,
कीन्हीं ना सलाम न बचन बोले सियरे ॥
'भूषन' भनत महावीर बलकन लाग्यो,
सारी पातसाही के उड़ाय गये जियरे ।
तमकते लाल मुख सिवा को निरखि भये,
स्याह मुख नौरंग सिपाह मुख पियरे ॥

जोग=योग्य, लायक । खरो कियो=खड़ा किया । जारिन=छोटे छोटे नौकर-चाकर जो पंज हज़ारी भी कहे जाते हैं । ग़ैरमिसिल=बेमौक़े । गुसैल=क्रोधी । सियरे = ठंडे, नम्र । बलकन=बकना । जियरे=जी । पियरे=पीले । तमक=गुस्सा । सारी पातसाही के उड़ाय गये जियरे=सब लोगों के छक्के छूट गये ।

शिवाजी महाराज जो सबके शिरोमणि बनने योग्य थे वे अपने को साधारण कोटि के सिपाहियों के मध्य खड़ा देखकर क्रोध से लाल होगये । उन्हें उस समय ऐसा गुस्सा आया कि न तो उन्होंने औरङ्गज़ेब को सलाम किया और न नम्रता से बातें कीं । शिवराज महाराज गुस्से को ज़ब्त न कर सके और उस समय उनके मुँह में से जो कुछ निकला, कह डाला । शिवाजी का तमतमाता सुर्ख़ चहरा देखकर औरङ्गज़ेब और उसके सर्दारों के छक्के छूट गये; मुखों पर मुर्दनी छा गई और रंग काले नज़र आने लगे ।

विषमालङ्कार—

(१८)

राना भौ चमेली और बेला सब राजा भए,
ठौर ठौर रस लेत नित यह काज है ।

सिगरे अमीर आनि कुन्द होत घर घर,
भ्रमत भ्रमर जैसे फूलन की साज है ॥
'भूषन' भनत सिवराज वीर तेंही देस,
देशन में राखी सब दच्छिन की लाज है।
त्यागे सदा षटपद-पद अनुमानि यह,
अलि नवरंगजेब चम्पा सिवराज है ॥

सिगरे=सब। भ्रमत भ्रमर=भौंरे उड़ते हैं। षट्पद-पद=भौंरे का पद या कार्य, भौंरापन। अलि=भौंरा। कुन्द=एक फूल, (फ़ारसी) सुरत।

औरङ्गज़ेब! तुमने खूब भौंरे की सी मिनमिनाहट कर रक्खी है। राना और राजाओं को तुमने भेड़—बकरी समझ लिया है। जब जी चाहा तभी किसी राजा पर चढ़ाई करदी और अपने को भौंरा समझ चट उसे बेला-चमेली की तरह चूस लिया। अर्थात् उससे कर ले लिया। परन्तु दक्षिण की लाज रखने वाले शिवराज तुम धन्य हो, तुमने इस भयंकर भ्रमर के लिये अपने को बेला, चमेली या कुन्द कली नहीं बनाया। तुम उसके लिये बराबर *चम्पा बने हुए हो। क्या मजाल है जो औरङ्गज़ेब तुम्हारे पास पंख भी फड़फड़ा सके-झाँक भी जाय।

समअभेदरूपक अलङ्कार—

---

* भौंरा और सब फूलों से तो रस संचय करता है परन्तु चम्पा के फूल के पास नहीं जाता। किसी ने कहा भी है—

चम्पा तो में तीन गुण, रूप रंग अरु बास।
अवगुण तो में कौन है, भौंर न आवे पास॥

(१९)

कूरम कमल कमधुज है कदम फूल,
गौर है गुलाब राना केतकी विराज है।
पाँडुरी पँवार जुही सोहत है चन्द्रावल,
सरस बुँदेला सो चमेली साज वाज है॥
'भूषन' भनत मुचुकुन्द बड़गूजर हैं,
बघेले वसन्त सब कुसुम समाज है।
लेइ रस एतेन को वैठि न सकत अहै,
अलि नवरंगजेव चम्पा सिवराज है॥

कुसुम=फूल। कूरम (कूर्म)=कूर्मवंशीय कछवाहे क्षत्रिय जयपुर वाले। कमधुज (कवंधज)=जोधपुर वाले, कवंध (रुण्ड) से पैदा हुए। लोकोक्ति है कि कन्नौज नरेश जयचन्द के रुण्ड ने युद्ध में लड़ाई लड़ी थी तभी से उनके वंशज कमधुज या कवंधज कहलाये। गौर=क्षत्रियों की एक उपजाति जो सम्भवतः गौरए भी कहलाते हैं। राना=महाराणा उदयपुर। राणा राजसिंह के यहां प्रवेश करने में औरंगज़ेब को बड़ी कठिनाई हुई, इसीलिये उनकी उपमा कांटेदार केतकी से दी गयी है, 'भौंर न छांड़ें केतकी, तीखे कण्टक जानि।' पँवार=क्षत्रियों की उपजाति। मुचुकुन्द=एक प्रकार का फूल। पाँडुरी=एक प्रकार का फूल। चन्द्रावल=चन्दावत राजपूत।

भूषणजी ने इस छन्द में औरङ्गज़ेब को भ्रमर मानकर कितने ही हिन्दू नरेशों की विविध फूलों से समता की है तथा उनका उसके द्वारा चूसा जाना बताया है। शिवराज की समता यहाँ भी चम्पा से ही की है जिस पर भौंरा नहीं बैठ पाता।

समअभेदरूपक अलङ्कार—

(२०)

देवल गिरावते फिरावते निसान अली,
ऐसे डूबे राव राने सबी गए लबकी।
गौरा गनपति आप औरन को देत ताप,
आपनी ही बारि सब मारि गए दबकी॥
पीरा पयगम्बरा दिगम्बरा दिखाई देत,
सिद्ध की सिधाई गई रही बात रबकी।
कासिहु की कला जाती मथुरा मसीत होती,
सिवाजी न होतो तो सुनति होती सब की॥

देवल (देवालय)=मन्दिर। निसान=झण्डे। लबकी=निर्बल होगये, भाग गये, लुक-छिप गये। दबकी=छिप गये। रबकी=खुदा की, यहाँ मुसलमानों के देवता से मतलब है। मसीत=मस्जिद। सुनति=ख़तना, मुसलमानी। दिगम्बरा=दिगम्बर, औलिया, नंग धड़ङ्ग, मुसलमान फक्कड़ से मतलब है।

औरङ्गजेब ने अपनी मतान्धता की आँधी में हिन्दू देव मन्दिरों को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। अली के फहराते हुए झण्डे देखकर राजा-राव सब भाग गये। गौरा-गणपति भक्तों को तो दण्ड देते रहते हैं परन्तु खुद अपने मन्दिरों पर कुदाल चलता देख न जाने कहाँ जा छिपे चारों ओर मुसलमानों के पीर-पैग़म्बर और नंग-धड़ङ्ग फ़कीर ही नजर आते थे, सिद्धों की सिद्धई कर्पूर की तरह उड़ गई थी। शिवराज! तुम धन्य हो, अगर तुम न होते तो काशी कलाहीन होजाती और मथुरा मस्जिद की शकल में दिखायी देने लगती। यहाँ तक कि जितने हिन्दू थे

सब के खतने हो जाते, लोग वेद-पुराण तथा शास्त्रों को छोड़कर कुरान पढ़ने लगते।

यह बात भूषणजी ने वैसे ही नहीं लिख दी प्रत्युत ऐतिहासिक घटना के आधार पर लिखी है। संवत् १७२६ वि० में औरंगजेब ने कितने ही मंदिर तुड़वाए, मथुरा में केशवराय का देहरा तथा काशी में विश्वनाथजी का मंदिर गिरवा कर उसके स्थान में मसजिद बनवाई।

(२१)

साँच को न मानै देवी देवता न जानै अरु,
ऐसी उर आनै मैं कहत बात जब की।
और पातसाहन के हुती चाह हिन्दुन की,
अकबर साहजहाँ कहै साखि तब की॥
बब्बर के तब्बर हुमायूँ हद्द बाँधि गए,
दोनों एक करी ना कुरान वेद ढब की।
कासिहु की कला जाती मथुरा मसीत होती,
सिवाजी न होतो तो सुनति होती सब की॥

उरआनै=विचार करे, सोचे। साखि=साक्षी, गवाह। तब्बर=टब्बर, पुत्र। कहीं कहीं "बब्बर के तब्बर या (के तिब्बर) हुमायूँ हद्द बांधि गए" भी पाठ है, अर्थात् बब्बर (बाबर) कितनी ही बार अथवा तीन बार हद्द बांध गये। ढब=प्रकार। दोनों एक करी ना कुरान वेद ढब की=वेद और कुरान को मिलाकर एक नहीं किया बल्कि दोनों का ढब (प्रकार) अलग अलग रक्खा।

अकबर, शाहजहां आदि बादशाहों ने तो हिन्दुओं के धार्मिक भावों का आदर किया, बाबर और हुमायूं ने भी हिन्दू-मुसलमानों को दो दृष्टियों से नहीं देखा परन्तु एक औरङ्गज़ेब है जो न सत्य को मानता है और न हिन्दुओं के देवी-देवताओं का आदर करता है।

(२२)

कुंभकर्न असुर औतारी अवरंगजेब,
कीन्हीं कत्ल मथुरा दोहाई फेरी रब की।
खोदि डारे देवी देव सहर मुहल्ला बाँके,
लाखन तुरुक कीन्हे छूटि गई तबकी॥
'भूषन' भनत भाग्यो कासीपति विश्वनाथ,
और कौन गिनती मैं भूली गति भव की।
चारों वर्न धर्म छोडि़ कलमा नेवाज पढ़ि,
सिवाजी न होतो तो सुनति होति सब की॥

कुम्भकर्न=कुम्भकर्ण, रावण का छोटा भाई। असुर=राक्षस। तबकी (तबक़ा)=सम्प्रदाय। भव=महादेव।

राक्षस-राज कुम्भकर्ण के समान औरङ्गजेब ने, मथुरा में सर्व-संहार कर इस्लाम का डङ्का बजा दिया। देवी-देवता तथा पुर-परिवार सब नष्ट-भ्रष्ट कर दिये। लाखों हिन्दू ज़बरदस्ती मुसलमान बना डाले। यहाँ तक कि काशीश्वर विश्वनाथ की भी सिट्टी ग़ायब हो गई, वे भी मैदान छोड़कर भाग गये। सचमुच शिवाजी न होते तो वर्णाश्रम धर्म लुप्त हो गया होता। सर्वत्र कलमा और नमाज़ की ही धूम दिखाई देती।

१६६९ ई० में औरङ्गजेब ने काशी में विश्वनाथ के मन्दिर पर आक्रमण किया था, कहते हैं कि उस समय विश्वनाथ की मूर्ति, मन्दिर के पिछवाड़े ज्ञानवापी नामक कुए में कूद पड़ी थी, (अर्थात् फेंक दीगयी थी) 'भाग्यो कासीपति विश्वनाथ' से भूषण का अभिप्राय इसी घटना की ओर संकेत करना है।

कलमा—'ला इलाहे इल्लिल्लाह मुहम्मद उल् रसूलिल्लाह' अर्थात् परमात्मा तथा उसके रसूल मुहम्मद के सिवाय और कोई नहीं है।

नमाज़—मुसलमानों की ईश्वर-प्रार्थना-विधि। यह प्रार्थना रात-दिन में पाँच बार की जाती है।

(२३)

दावा पातसाहन सों कीन्हों सिवराज वीर,
जेर कीन्हों देस हद्द बाँध्यो दरबारे से।
हठी मरहठी तामें राख्यो न मवास कोऊ,
छीने हथियार डोलें बन बनजारे से॥
आमिष अहारी माँस हारी दै दै तारी नाचें,
खाँडे तोड़ किरचैं उड़ाये सब तारे से।
पील सम डील जहाँ गिरि से गिरन लागे,
मुंड मतवारे गिरें झुंड मतवारे से॥

ज़ेर=अधीन। मवास=मोर्चा, किला। पातसाह=बादशाह। बनजारे=एक जाति विशेष के लोग जो घर न बना कर इधर उधर घूमते फिरते हैं। आमिष=गोश्त। खांड़े=खड्ग। तोड़=तोड़ेदार बन्दूकें। तारे=तार की तरह।

शिवराज ने बादशाहों से मुक़ाबिला करके अपने राज्य की सीमा अलग बाँध ली। वीर मरहठों ने ऐसा कोई मुग़ली क़िला न छोड़ा जिसके सब हथियार न छीन लिये हों। तलवारें, बन्दूक़ें तथा किरचें सब तार की तरह तोड़ डाली गयीं। बड़े बड़े विशालकाय शत्रु पहाड़ों की चट्टान की तरह धम्मधम्म धरती पर गिरने लगे। मतान्ध मुसलमानों के समुदाय मदोन्मत्तों की भांति धराशायी होने लगे, जिन्हें देखकर मांस खाने वाले पशु पक्षियों की खुशी का ठिकाना न रहा। वे सब लोथों से पेट भरकर प्रसन्नतापूर्वक ताली बजाने लगे।

पूर्णोपमालङ्कार—

(२४)

छूटत कमान और तीर गोली बानन के,
मुसकिल होति मुरचान हू की ओट में।
ताही समै सिवराज हाँक मारि हल्ला कियो,
दावा बाँधि परा हल्ला वीर वर जोट में॥
'भूषन' भनत तेरी हिम्मति कहाँ लों कहों,
किम्मति इहाँ लगि है जाकी भट झोट में।
ताव दै दै मूँछन कँगूरन पै पाँव दै दै,
अरि मुख घाव दै दै कूदे परैं कोट में॥

कमान=धनुष, मिश्रबन्धुओं ने कमान का अर्थ तोप किया है। हांक मारि=ललकार कर। हल्ला=हमला, आक्रमण। हल्ला=हाहाकार। क़िम्मति=मूल्य। जोट=जोड़। झोट=समूह। ताव दैदै मूछन=मूछें मरोड़ कर। अरि मुख······दै दै=शत्रुओं को जख़्मी करके। कोट=क़िला।

जब मोरचों की आड़ में भी गोला बारी से रक्षा न हो सकी तब बड़ी वीरता से शिवराज ने बैरियों को ललकारते हुए आक्रमण किया। शत्रु-दल दहला गया और मराठे वीर बड़ाई करने लगे। इससे उनकी इतनी हिम्मत बँध गई कि वे मूंछें मरोड़ते, दुश्मनों के हौसले पस्त करते, कँगूरों पर चढ़कर चट क़िले में कूद पड़े।

(२५)

उतै पातसाहजू के गजन के ठट्ट छूटे,
उमड़ि घुमड़ि मतवारे घन कारे हैं।
इतै सिवराजजू के छूटे सिंहराज औ,
विदारे कुंभ करिन के चिक्करत भारे हैं॥
फौजें सेख सैयद मुगल औ पठानन की,
मिलि इखलासखाँ हू मीर न सँम्हारे हैं।
हद्द हिन्दुवान की विहद तरवारि राखि,
कैयो बार दिली के गुमान झारि डारे हैं॥

ठट्ट=झुण्ड। घन=बादल। करि=हाथी। कुम्भ=मस्तक। मीर=सरदार। वेहद=असीम, बहुत बड़ा। कैयो=कई। चिक्करत=चिंघाड़ते हैं। विदारना=फाड़ना। गुमान=घमण्ड।

औरङ्गज़ेब के काले बादलों से दीर्घाकार हाथी, अपने मस्तकों पर शिवराज के सिंह सदृश योद्धाओं के भीषण प्रहार होते देख ज़ोर से चिंघाड़ उठे। सेना का सँभालना, सरदार इख़लास* की शक्ति से बाहर हो गया। पराक्रमी शिवराज ने अपनी तलवार द्वारा कई बार दिल्ली का मान-मर्दन कर हिन्दुत्त्व की रक्षा की।

* १७२६ वि० में सलेहरि युद्ध में मुग़लों का सेनापति।

(२६)

जीत्यो सिवराज सलहेरि को समर सुनि,
सुनि असुरन के सुसीने धरकत है।
देवलोक नागलोक नरलोक गावैं जस,
अजहूलों परे खग्ग दाँत खरकत हैं॥
कंटक कटक काटि कीट से उड़ाय केते,
'भूषन' भनत मुख मोरे सरकत हैं।
रनभूमि लेटे अधकटे फरलेटे परे,
रुधिर लपेटे पठनेटे फरकत है॥

असुर=राक्षस, यहां मुसलमानों से मतलब है। खग्ग दांत=तलवार के दांते। समर=युद्ध। देवलोक=स्वर्ग। नरलोक=मृत्युलोक। नागलोक=पाताल। कटक = सेना। कीट=कीड़ा। मुख मोरे सरकत हैं=मुँह मोड़कर या पीठ दिखाकर खिसक गये। पठनेटे=नौजवान पठान। फरलेटे=बाणविद्धा। फरकत हैं=फड़कते हैं।

शिवराज द्वारा सलेहरि की लड़ाई जीत जाने की ख़बर पाकर मुसलमानों के परिताप का ठिकाना न रहा। बहुत से घायलों के शरीरों में तो खांड़े के दन्तों की चुभन बुरी तरह कसक रही है। शिवाजी की तलवार ने कितने ही शत्रु यमलोक को पहुँचा दिये और कितने ही मारे डर के पीठ दिखाकर भाग गये, कितने ही वाण विद्ध पठान, खून में लथ-पथ हुए रण-भूमि में मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

वृत्यानुप्रास अलङ्कार—

(२७)

मालती सवैया

केतिक देस दल्यो दल केबल दच्छिन चंगुल चांपि कै चाख्यो।
रूप गुमान हर्‌यो गुजरात को सूरत को रस चूँसि कै नाख्यो॥
पंजन पेलि मलिच्छ मले सब सोई बच्यो जेहि दीन ह्वै भाख्यो।
सो रंग है सिवराज बली जेहि नौरँग में रँग एक न राख्यो॥

दल्यो = दले, परास्त किये। दल=सेना। चांपि=दबा कर। नाख्यो= फेंक दिया। पंजनपेलि = पंजे में पेलकर (दबाकर)। मलेच्छ = मुसलमान। भाख्यो=बोला।

शिवाजी ने अपनी सेना के प्रबल पराक्रम द्वारा कितने ही देशों को पद दलित कर दिया। दच्चिण देश को पंजे में दबाकर चाट गये, गुजरात का गर्व नष्ट कर दिया और सूरत * की सूरत बिगाड़ दी। जिसने हा हा खाकर दीनता स्वीकार की वह तो बचा; नहीं तो बाक़ी सब चकनाचूर कर दिये गये। सचमुच शिवराज के एक रंग ने नौरंग (औरङ्गज़ेब) का एक भी रंग बक़ाया न रहने दिया। उसे ऐसी बुरी तरह पछाड़ा कि सारे हौसले मिट्टी में मिल गये।

यह मालती सवैया है, इसके प्रत्येक चरण में ७ भगण और अन्त में दो गुरु होते हैं।

काव्यलिङ्ग अलङ्कार—

---

* १६६४ और १६७०-१६७८ ई० में शिवाजी ने सूरत पर आक्रमण किया था।

(२८)

सूबा निरानँद बादरखान गे लोगन बूझत ब्यौंत बखानो।
दुग्ग सबै सिवराज लिये धरि चारु विचार हिये यह आनो॥
'भूषन' बोलि उठे सिगरे हुतो पूना में साइतखान को थानो।
जाहिर है जग में जसवंत लियो गढ़सिंह में गीदर बानो॥

सूबा=सूबेदार। निरानँद=निरुत्साह। बादरखां=बहादुरखां। ब्यौंत=विधि तरक़ीब। दुग्ग (दुर्ग)=किला। धरि=छीनना। चारु=सुन्दर। हिये यह आनों=इसे हृदय में सोचो। थानों=अड्डा। गीदरबानो=स्यार का वेश, गीदड़पन, भीरुता।

सूबेदार बहादुरखाँ ने बड़ी उदासीनतापूर्वक अपने सरदारों से पूछा, भाइयो! हमारे अच्छे अच्छे सब क़िलों पर शिवराज का झण्डा फहराने लगा! बताओ अब क्या करें? कोई उपाय सोचना चाहिए इस पर सबने एक स्वर हो बड़ी निराशा से कहा, हुजूर! अबतो शिवराज का विजय-डङ्का बज रहा है, उसके मुक़ाबिले में जीतना महा कठिन है। जोधपुराधीश राजा जसवन्त सिंह और शायस्ताख़ाँ * जो पूना में अपना अड्डा क़ायम कर चुके थे, वे भी गीदड़ की तरह दुम दबाकर भाग गये।

---

* १७२० वि० में औरंगज़ेब के ये दोनों वीर शिवाजी पर धाक जमाने के विचार से पूना भेजे गये थे। इनके साथ एक लाख सेना थी परन्तु इनके सब प्रयत्न निष्फल हुए। ये शिवाजी द्वारा परास्त होकर उलटे पैर लौट गये।

(२९)

कवित्त मनहरण

जोरि कर जैहैं जुमिला हू के नरेस पर,
तोरि अरि खंड खंड सुभट समाज पै।
'भूषन' असाम रूम बलख बुखारे जैहैं,
चीन सिलहट तरि जलधि जहाज पै॥
सब उमरावन की हठ कूरताई देखो,
कहैं नवरंगजेब साहि सिरताज पै।
भीख माँगि खैहैं बिन मनसब रैहैं पै न,
जैहैं हजरत महाबली सिवराज पै॥

जोरि करि=जोर करके, बलपूर्वक। जैहैं, जय पावेंगे, जीतेंगे। जोरि कर जैहैं=हाथ जोड़ कर जायेंगे, ज़बर्दस्ती जाना पड़ेगा। जुमिला=सम्भवत: जलना नामक स्थान, फ़ारसी शब्द 'जुमला' अर्थात् सब या सर्वत्र भी हो सकता है। अरि=दुश्मन। जलधि=समुद्र। मनसब=पदाधिकार। हज़रत= महाशय। कूरताई=कायरता, डरपोकपन।

सरदार लोग औरङ्गज़ेब से कहते हैं कि—हुक्म हो तो हुज़ूर! 'जुमिला' (सब) राजाओं को चकनाचूर करदें, बलख़-बुख़ारे की तबाही बुलादें, चीन और सिलहट को मिट्टी में मिलादें पर जहांपनाह! हमें महाबली शिवराज के आगे न भेजिये। हम भीख मांग खायंगे, ओहदे छोड़ देंगे, मगर उस खूंख्वार के मुक़ाबले में न जांयगे।

(३०)

चन्द्रावल चूर करि जावली जपत कीन्हों,
मारे सब भूप औ सँहारे पुर धाय कै।
'भूषन' भनत तुरकान दलथंभ काटि,
अफजल मारि डारे तबल बजाय कै॥
एदिल सों बेदिल हरम कहै बार बार,
अब कहा सोवौ सुख सिंहहिं जगाय कै।
भेजना है भेजौ सो रिसालैं सिवराजजू की,
बाजी करनालैं परनालैं पर आय कै॥

चूरकरि=नष्ट-भ्रष्ट करके। जपत=ज़ब्त करना, छीनना। संहारे=नष्ट किये। दलथम्भ=दल (सेना) को थम्भ (थामने वाला) सेनापति। तबल=डंका एक प्रकार का हथियार। रिसालैं=ख़िराज, राज्य-कर। करनालें=तोपें, बन्दूकें। एदिल=आदिलशाह। बेदिल=उदासीन, हताश। बाजीं=छूटने लगी दगने लगीं।

'बीजापुर के सूबेदार आदिलशाह को उसकी बेगमें बड़े दुःख से समझा रही हैं कि जिस शिवाजी ने चन्द्रावल (चन्द्रराव) को परास्त कर, जावली[२] पर अपना अधिकार जमा लिया, जो सब राजाओं को मार कर उनके पुरवासियों को नष्टकर चुका है, जिसने खुल्लमखुल्ला डंके की चोट तुर्कों के सेनापति

१—बीजापुर का शासक २—'जावली' स्थान विशेष का नाम है। चन्द्रावल या चन्द्रराव जावली का राजा था। १७१२ वि० में शिवाजी ने इस स्थान को जीता था।

तथा अफ़ज़लखाँ[१] का बध कर डाला ! भला अब उस शेर को जगाकर तुम सुख की नींद सो रहे हो। देखिये, आपके परनाल[२] के क़िले पर शिवाजी की तोपें दग़ रही हैं। अगर ख़िराज (राज-कर) उसे भेजकर अधीनता स्वीकार करनी है तो करलो, वरना ख़ैर नहीं।

अनुप्रासालङ्कार—

(३१)

मालती सवैया

साजि चमू जनि जाहु सिवा पर सोवत सिंह न जाय जगावो।
तासों न जंग जुरौ न भुजंग महाविष के मुख में कर नावो॥
'भूषन' भाषत वैरि बधू जनि, एदिल औरँग लों दुख पावो।
तासु सुलाह कि राह तजौ मति नाह दिवाल की राह न धावो॥

चमू=सेना। जंग=युद्ध। भुजंग=काला साँप। नावो=डालो। जनि=मत निषेधात्मक। लों=तरह। सुलाह=सन्धि। नाह=पति। दिवाल की राह न धावो=दीवाल की तरफ़ मत दौड़ो नहीं तो तुम उससे टकरा कर चूर चूर हो जाओगे।

शत्रु-स्त्रियां अपने पतियों से कहती हैं कि आप लोग शिवाजी पर चढ़ाई करके क्यों काले नाग के मुँह में उंगली देते हैं। जिस बहादुर ने औरङ्गज़ेब और आदिलशाह के दाँत खट्टे कर दिये उससे सन्धि कर लेने में ही भलाई है।

लोकोक्ति अलङ्कार—

१—अफ़ज़लख़ां बीजापुर का हाकिम था, १७१६ वि० में शिवाजी ने इसका बड़े कौशल से बध किया। २—बीजापुर राज्य में यह एक क़िला था जो १७३० वि० में सर किया गया था।

६

(३२)

छप्पय

विज्ञपूर बिदनूर सूर सर धनुष न संधहिं।
मंगल बिनु मल्लारि नारि धम्मिल नहिं बाँधहिं॥
गिरत गब्भ कोटै गरब्भ चिंजी चिंजा डर।
चालकुंड दलकुंड गोलकुंडा संका उर॥
'भूषन' प्रताप सिवराज तब इमि दच्छिन दिसि संचरहिं।
मधुरा धरेस धक धकत सो द्रविड़ निविड़ डर दबि डरहिं॥

धनुष न संधहिं=धनुष पर बाण नहीं चढ़ाते। मंगल=सौभाग्य। धम्मिल=फूल-मोती आदि की तरह बालों में गुथने वाला एक आभूषण। गब्भ=गर्भ। कोटै गरब्भ=क़िले के गर्भ में अर्थात् अन्दर। चिंजी चिंजा=बेटी-बेटा, सम्भवतः यह चिरंजीव का अपभ्रंश है। संका=भय। उर=हृदय। धरेस=राजा। निविड़=घोर, महा। विज्ञपूर=बीजापुर। बिदनूर[1]=गुजरातका एक स्थान। मल्लारि=मालावार। चालकुण्ड[2]=एक बन्दरगाह। दलकुण्ड=एक स्थान विशेष। मधुरा=मदुरा ज़िला जो मदरास में है।

शिवाजी के प्रचण्ड प्रताप से बीजापुर और बिदनूर के वीरों ने धनुष रख दिये हैं, मालावार की स्त्रियाँ सौभाग्य-चिन्ह त्यागकर खुले केश डोल रही हैं, शत्रुओं की औरतें यद्यपि क़िले में सुरक्षित हैं तथापि मारे डर के उनके गर्भ गिर रहे हैं तथा कच्चे-बच्चे काँप रहे हैं। सर्वत्र शिवाजी का भय तथा आतंक,

---

१—यह स्थान शिवाजी ने १६६४ ई० में जीता था। २—इसके पास सन् १५३१ ई० में ईसाइयों ने एक क़िला बनवाया था।

छाया हुआ है, बड़े बड़े वीर मुँह छिपाये पड़े हैं, कोई चूं तक नहीं करता।

अनुप्रास अलंकार—

(३३)

कवित्त मनहरण

अफ़जल खान गहि जाने मयदान मारा,
बीजापुर गोलकुंडा मारा जिन आज है।
'भूषन' भनत फ़रासीस त्यों फिरंगी मारि,
हवसी तुरुक डारे उलट जहाज है॥
देखत में रुसुतमखाँ को जिन खाक किया,
सालति सुरति आजु सुनी जो अवाज है।
चौंकि चौंकि चकता कहत चहुँधाते यारो,
लेत रहो खबरि कहाँ लों सिवराज है॥

गहि=पकड़ कर। मयदान मारा=विजय प्राप्त की। सालति=कसकती है। सुरति=श्रुति (कान) अथवा स्मृति, याददाश्त। चहुंधा=चारों ओर। लों=तक। चौंकि चौंकि=डर से उछल उछल कर।

औरङ्गज़ेब सभीत हो अपने सर्दारों से कहते हैं—दोस्तो! जिसने अफ़जलख़ाँ, बीजापुर, गोलकुण्डा, फरासीसी[1], फिरंगी, हवशी[2],

---

१—सूरत को लूटते समय फ़रासीसी तथा पुर्तगाल वालों ने शिवाजी के विरुद्ध छेड़छाड़ की थी इसलिये इन लोगों की भी बस्तियाँ लूटी गयी थीं। २—इन्हीं दिनों शिवाजी ने मक्का जाने वाले मुसलमानों की कुछ नावें भी लूटी थीं।

तुरक, रुस्तमख़ाँ[१] सब को मिट्टी में मिला दिया; जिसकी डरावनी दहाड़ से अब भी हमारे दिल दहले जाते हैं उस शिवराज की चारों ओर से खूब ख़बर रखना कि कहाँ तक चढ़ आया है।

(३४)

फिरंगाने फिकिरि औ हदसनि हवसाने,
'भूषन' भनत कोऊ सोवत न घरी है।
बीजापुर बिपति बिडरि सुनि भाजे सब,
दिल्ली दरगाह बीच परी खर भरी है॥
राजन के राज सब साहिन के सिरताज,
आज सिवराज पातसाही चित धरी है।
बलख बुखारे कसमीर लों परी पुकार,
धाम धाम धूम धाम रूम साम परी है॥

फिरँगाने=फ़िरंगी, मिश्र बन्धुओं के अर्थ में बाबर के पिता का राज्य। हदसनि=भय। हवसाने=हवश वालों की जगह, सम्भवतः ऐबसीनिया। दरगाह=दरबार। खरभरी=खलबली। साहिन=बादशाहत।

शिवाजी के बादशाही तख़्त छीनने के इरादे को सुन कर फ़िरंगियों और हवश वालों की चिन्ता का ठिकाना नहीं रहा, उन्हें रात को नींद तक नहीं आती। बीजापुर के विपत्ति-वज्रपात से डर कर सब लोग भाग गये, औरङ्गज़ेब के दरबारियों में

१.....१६५९ ई० में परनाले के निकट शिवाजी और रुस्तम की मुठभेड़ हुई थी जिसमें रुस्तम (रुस्तमे ज़मां) को बुरी तरह परास्त होना पड़ा था।

बुरी बेचैनी पैदा हो गई है । इतना ही नहीं, बलख़बुख़ारा, कश्मीर, रूम, स्याम सर्वत्र इसी महावीर के अद्भुत आतङ्क की धूम मची हुई है, उसके प्रचण्ड प्रताप मार्तण्ड के कारण सबके छक्के छूट गये हैं ।

(३५)

गरुड़ को दावा सदा नाग के समूह पर,
दावा नाग जूह पर सिंह सिरताज को ।
दावा पुरुहूत को पहारन के कुल पर,
पच्छिन के गोल पर दावा सदा बाज को ॥
'भूषन' अखंड नवखंड महि मंडल में,
तम पर दावा रवि किरन समाज को ।
पूरब पछाँह देस दच्छिन ते उत्तर लों,
जहाँ पातसाही तहाँ दावा सिवराज को ॥

नाग=हाथी, साँप । पुरुहूत=इन्द्र । गोल (ग़ोल)=झुण्ड । तम=अन्धेरा । रवि-किरन=सूर्य की किरणें ।

जिस प्रकार गरुड़ साँपों को सटक जाता है, सिंह हाथियों के छक्के छुड़ा देता है, इन्द्र पहाड़ों की उछल कूद* बन्द कर चुका है, बाज पक्षियों पर क़ाबू किये रहता है, सूर्य अन्धकार को

* पुराणों में लिखा है कि किसी समय पहाड़ों के भी पंख थे, वे भी पक्षियों की भांति उड़ सकते थे । परन्तु इनके उड़ान से देवताओं को बड़ा कष्ट होता था । इन्होंने अपने राजा इन्द्र से शिकायत की तब इन्द्र महाराज ने अपने शाप द्वारा पहाड़ों के पंख छीन लिये और उनकी उछल कूद बन्द कर दी । इसी से इन्द्र को 'पर्वतारि' भी कहते हैं ।

छिन्नभिन्न कर देता है, उसी प्रकार शिवराज महाराज ने सारे देश की बादशाही पर कब्ज़ा करने के लिये घोर-घोषणा कर रक्खी है। जिधर जाइये 'शिवराज' का ही नाम सुन पड़ता है। मानो मुसल्मान शासकों को सब भूल गये, उन्हें कोई जानता तक नहीं।

निदर्शनालङ्कार—

(३६)

दारा की न दौर यह रार नहिं खजुवे की,
बाँधिवो नहीं है कैधों मीर सहवाल को।
मठ विस्वनाथ को न बास ग्राम गोकुल को,
देव को न देहरा न मंदिर गोपाल को॥
गाढ़े गढ़ि लीन्हे और बैरी कतलाम कीन्हे,
ठौर ठौर हासिल उगाहत है साल को।
बूड़ति है दिल्ली सो सम्हारे क्यों न दिल्ली पति,
धक्का आनि लाग्यो सिवराज महाकाल को॥

दारा=औरंगज़ेब का भाई। दौर=चढ़ाई, धावा। रारि=लड़ाई। गाढ़े गढ़=बड़े या मज़बूत क़िले। हासिल=राज-कर, ख़िराज। उगाहत=वसूल करता। सालको=वार्षिक।

औरङ्गज़ेब! किस ख़याल में हो? सँभलो, सोचो। महा-वली शिवराज आक्रमण करता हुआ निकट आ रहा है, बचा सकते हो तो दिल्ली को बचाओ, नहीं तो यह डूबी—हाथ से गई! याद रहे, यह काम उतना सरल नहीं है जितना दारा पर चढ़ाई

करना, खजुए१ की लड़ाई जीतना, सहवाल२ को बांधना, विश्वनाथ का मन्दिर तोड़ना, गोकुल में अड्डा जमाना या देव३ का देहरा गिरा देना आदि था। यह टेढ़ी खीर है, इसका कुछ उपाय जल्द सोचिये।

आक्षेपालङ्कार—

(३७)

गढ़न गँजाय गढ़धरन सजाय करि,
छाँड़े केते धरम दुवार दै भिखारी से।
साहि के सपूत पूत वीर सिवराज सिंह,
केते गढ़धारी किये बन बनचारी से॥
'भूषन' बखानै केते दीन्हे बंदीखाने सेख,
सैयद हजारी गहे रैयत बजारी से।
महता से मुगुल महाजन से महाराज,
डाँडि लीन्हे पकरि पठान पटवारी से॥

गँजाय=तोड़कर। गढधर=क़िलेदार। केते=कितने ही। हज़ारी=एक हज़ार सिपाहियों का हाकिम। महता=मुसद्दी, मुन्शी। महाजन = कलवार, सेठ-साहूकार। डांडि लीन्हे = दण्ड दिया।। सजाय कर=सज़ा देकर।

१—१७१६ वि० में, खजुए में औरंगज़ेब ने अपने भाई शाहशुजा को पराजित किया था। खजुआ फतेहपुर ज़िले में विंदकी के पास एक गाँव है। २—शहबाज़ख़ाँ शुद्ध नाम है यह एक साधारण सरदार था। ३—देव से ओड़छा नरेश वीरसिंह देव से मतलब है, इन्होंने मथुरा में केशवराय का देहरा बनवाया था जिसे औरंगज़ेब ने नष्ट करडाला।

शिवाजी ने शत्रुओं के क़िलों को मिस्मार कर क़िलेदारों को क़ैद कर लिया, कितनों ही को भिखारी की भांति दयादान देकर छोड़ दिया, कितने ही सर्दार घर-बार नष्ट हो जाने से बनवासी बन गये ! जिन हाकिमों के मातहत हज़ार हज़ार सिपाही थे आज वे खुद कलवार मुसद्दियों की तरह रैयत बन कर राज कर दे रहे हैं और साधारण पटवारियों के समान दण्डित किये जाते हैं। कैसा अद्भुत परिवर्तन और कितना विपरीत विधान है !

पूर्णोपमालङ्कार—

(३८)

सक्र जिमि सैल पर अर्क तम फैल पर,
बिघन की रैल पर लंबोदर लेखिये।
राम दसकंध पर भीम जरासंध पर,
'भूषन' ज्यों सिन्धु पर कुम्भज बिसेखिये ॥
हर ज्यों अनंग पर गरुड़ भुजंग पर,
कौरव के अंग पर पारथ ज्यों पेखिये।
वाज ज्यों बिहंग पर सिंह ज्यों मतंग पर,
म्लेच्छ चतुरंग पर सिवराज देखिये ॥

सक्र (शक्र) = इन्द्र। सैल (शैल)=पर्वत। अर्क=सूर्य। तमफैल = अन्धकार राशि। लम्बोदर=गणेश। दशकन्ध=रावण। कुम्भज=अगस्त। हर=महादेव। अनंग=कामदेव। पारथ (पार्थ)=अर्जुन। मतङ्ग=हाथी। चतुरंग चमू=रथ, हाथी, घोड़ा और पैदल संयुक्त सेना।

जिस प्रकार इन्द्र पर्वतों का, सूर्य अन्धकार का, गणेश विघ्नों का, राम रावण का, भीम जरासन्ध का, अगस्त्य समुद्र

का, शिव कामदेव का, गरुड़ सर्पों का, अर्जुन कौरवों का, बाज पक्षियों का और सिंह हाथी का मान मर्दन कर चुके या करते रहते हैं उसी प्रकार शिवाजी यवनों की चतुरङ्गिणी सेना के लिये काल रूप हैं।

इन्द्र पर्वतों का क्यों शत्रु है, यह बात इसी पुस्तक में दूसरी जगह बताई जा चुकी है। पुराणों में लिखा है कि अगस्त्यजी समुद्र का सारा पानी पी गये थे। हर (महादेव) ने अनंग (कामदेव) को क्रुद्ध हो भस्मीभूत कर दिया था।

मालोपमालङ्कार—

(३९)

वारिधि के कुंभ भव घन बन दावानल,
तरुन तिमिर हू के किरन समाज हौ।
कंस के कन्हैया कामधेनु हू के कंटकाल,
कैटभ के कालिका बिहंगम के बाज हौ॥
'भूषन' भनत जम जालिम के सचीपति,
पन्नग के कुल के प्रबल पच्छिराज हौ।
रावन के राम कार्तबीज के परसुराम,
दिल्लीपति दिग्गज के सेर सिवराज हौ॥

वारिधि=समुद्र। घन=बादल। दावानल=जंगल की अग्नि। तरुन (तरुण)=युवा, यहाँ घोर से मतलब है। कंटकाल=कांटों का घर। पन्नग=साँप। कार्तबीज (कार्तवीर्य)=सहस्रबाहु अर्जुन। जगजालिम=वृत्रासुर। सचीपति=इन्द्र।

जिस प्रकार समुद्र के लिये अगस्त्य, दावानल बुझाने के लिये बादल, घोर अन्धकार के लिये सूर्य-किरणें, कंस के लिये श्रीकृष्ण, कामधेनु के लिये कँटीला मार्ग, कैटभ[1] के लिये काली, पक्षियों के लिये बाज, जम[2] (यम) वृत्रासुर के लिये इन्द्र, साँपों के लिये गरुड़, रावण के लिये राम, कार्तवीर्य[3] अर्जुन के लिये परशुराम काल रूप हैं उसी प्रकार औरङ्गजेब रूपी हाथी के लिये शिवराज को सिंह समान समझिये।

सम अभेद रूपक अलङ्कार—

(४०)

दर बर दौरि करि नगर उजारि डारि,
कटक कटायो कोटि दुजन दरब की।
जाहिर जहान जंग जालिम है जोरावर,
चलै न कछूक अब एक राजा रब की॥
सिवराज तेरे त्रास दिल्ली भयो भुवकम्प,
थर थर काँपति विलायति अरब की।
हालति दहलि जात काबुल कँधार वीर,
रोष करि काढ़े समसेर ज्यों गरब की॥

१—कैटभ=एक प्रबल राक्षस जो काली द्वारा नष्ट-भ्रष्ट हुआ।

२—वृत्रासुर नामक राक्षस को, इन्द्र ने, दधीचि की हड्डियों से बने वज्र द्वारा मारा था।

३—कार्तवीर्य हैहय वंशीय अर्जुन का नाम है। इन्होंने परशुराम के पिता यमदग्नि को बिना अपराध के मार डाला था, इसी वध का बदला लेने के लिये परशुराम ने अर्जुन तथा उसके परिवार का इक्कीस बार संहार किया था।

दर बर=दल के बल से, सेना के सहारे। कटक······दुजन दरब कौ=दुर्जन के द्रव्य से एकत्र सेना कटवा डाली। रब=राव, अथवा खुदा परस्त मुसलमान। अरब=अरबस्तान। समसेर ज्यों गरब की=जिस प्रकार घमण्ड की तलवार। त्रास=भय। रोस करि=कुद्ध होकर। काढ़े=निकाले।

शिवाजी, आपने अपनी बहादुर फ़ौज की मदद से, दुष्टों के द्रव्य द्वारा एकत्र की हुई असंख्य सेना काट कर शत्रु के नगरों को उजाड़ डाला। अब आपके विश्व विदित प्रबल प्रताप के आगे किसी राव-राजा की कुछ नहीं चलती। तुम्हारे भय से दिल्ली दहला गई है और अरबस्तान काँप उठा है। जिस समय आप क्रुद्ध होकर म्यान से तलवार निकालते हैं उस समय वह बिजली की तरह कौंध जाती है और काबुल कन्धार तक रहने वालों के छक्के छुड़ा देती है।

अतिशयोक्ति अलङ्कार—

(४१)

सिवा की बड़ाई औ हमारी लघुताई क्यों
कहत बार बार कहि पातसाह गरजा।
सुनिये खुमान! हरि तुरुक गुमान महि-
देवन जेंवायो कवि भूषन यों सरजा॥
तुम वाको पाय कै जरूर रन छोरो वह
रावरे वजीर छोरि देत करि परजा।
मालुम तिहारो होत याही में निवारोरनु,
कायर सों कायर औ सरजा सों सरजा॥

खुमान=शिवाजी (चिरंजीव)। हरि=हरकर, छीनकर। अरजा=अर्ज़ किया, प्रार्थना की। महि देवन=ब्राह्मणों को। परजा=प्रजा। रावरे=आपका। निवेरा=निर्णय। सरजा=सिंह समान, वीर शिवाजी।

औरङ्गजेब पूछते हैं कि क्यों भाई भूषण! तुम शिवाजी का तो यशोगान करते रहते हो परन्तु हमारी निन्दा से नहीं अघाते, इसका क्या सबब है? इस पर भूषण ने कहा—हज़रत! शिवराज मुसल्मानों का अभिमान चूर चूर कर, ब्राह्मणों की रक्षा करते हैं, उन्हें भोजन देते हैं, तुम क्या करते हो? तुम तो मारे भय के मैदान में मुंह भी नहीं दिखाते। वह तुम्हारे बड़े बड़े सेनापतियों तथा सचिवों तक को जीत कर उन्हें अपनी दीन प्रजा बना कर छोड़ देता है, तुम उसे देखकर मैदान छोड़ कर भाग जाते हो। इसी से सिद्ध है कि कायर कायर होते हैं और बहादुर बहादुर।

(४२)

कोट गढ़ ढाहियतु एकै पातसाहन के,
एकै पातसाहन के देस दाहियतु है।
'भूषन' भनत महाराज सिवराज एकै,
साहन की फौज पर खग्ग बाहियतु है॥
क्यों न होंहि बैरिन की बौरी सुनि बैरि बधू,
दौरनि तिहारे कहौ क्यों निवाहियतु है।
रावरे नगारे सुनि बैर वारे नगरनि,
नैन वारे नदन निवारे चाहियतु है॥

ढाना=मिस्मार करना। दाहना=जलाना। खग्ग बाहियतु है=तलवार चलाता है। दौरनि=दौरे, धावे। निवारे=बड़ी नावें। बौरीं=बावली। रावरे......चाहियतु है=आपके नगाड़ों की धमक सुन वैरियों के नगर निवासी ऐसे रो रहे हैं कि उनके आँसुओं की नदी पार करने के लिये नावें चाहियें।

शिवाजी महाराज कभी किसी बादशाह का क़िला गिराते हैं, कभी किसी के देश में आग लगाते हैं, कभी शत्रु-सेना को तलवार के घाट उतारते हैं और कभी किसी अन्य उपाय को काम में लाते हैं। यह देख कर दुश्मनों को औरतें पागल हो गई हैं, अब उनमें शिवाजी के हमले सहने की शक्ति नहीं रही। वैरियों के नगरनिवासियों की आँखों से तो आँसुओं की नदी बह निकली है जिसे पार करने के लिये एक नाव की ज़रूरत है।

इस छन्द में शिवाजी के करनाटक की विजय का वर्णन है।

अतिशयोक्ति और अप्रस्तुत प्रशंसा अलङ्कार—

(४२)

चकित चकत्ता चौंकि चौंकि उठै बार बार,
दिल्ली दहसाति चितै चाह करषाति है।
बिलखि बदन बिलखात बिजैपुर पति,
फिरत फिरंगिन की नारी फरकाति है॥
थर थर काँपत कुतुबसाहि गोलकुंडा,
हहरि हबस भूप भीर भरकाति है।
राजा सिवराज के नगारन की धाक सुनि,
केते पातसाहन की छाती दरकाति है॥

दहसति=डर । करषति है=खड़कती है । बिलखि बदन=रोती सूरत। हहरि=डर कर। हवस भूप=हब्श देश का राजा। भरकति है=डर कर भागती है। दरकति है=फटती है। नारी=नाड़ी या स्त्री।

औरङ्गज़ेब आश्चर्यचकित हो कर बार बार चौंक उठता है। दिल्ली वालों के दिल में दहशत का कांटा खटक रहा है। बीजापुराधीश तन छीन, मन मलीन झख मारता फिरता है, मारे डर के फ़िरंगियों की स्त्रियां उछल उछल पड़ती हैं। गोलकुण्डा का बादशाह कुतबशाह भय से भेड़ बन गया है और हबशी बादशाह त्रस्त हो कर भागने की विधि सोच रहा है। शिवाजी के नगाड़ों की धमक सुनकर कितने ही बादशाहों के दिल दहल रहे हैं, हृदय विदीर्ण हुए जाते हैं। इससे अधिक किसी के प्रताप का प्रचण्ड मार्तण्ड और क्या प्रदीप्त होगा।

अतिशयोक्ति अलङ्कार—

(४४)

मोरँग[१] कुमाऊँवो पलाऊँ बाँधे एक पल,
कहाँ लों गनाऊँ जेऽव भूपन के गोत हैं।
'भूषन' भनत गिरि बिकट निवासी लोग,
बावनी[२] बवंजा[३] नवकोटि[४] धुंध जोत हैं॥

१—मौरंग, कुमाऊँ और पलाऊँ छोटी छोटी रियासतों के नाम हैं।

२—बावनी बुंदेलखण्ड में एक मुसलमानी रियासत है।

३—बवंजा या बजूना नामक स्थान फतहपुर सीकरी के पास था कोई कोई बावनी-बवंजा से बरार प्रान्त का अर्थ भी लेते हैं।

४—नवकोटि=मारवाड़ प्रान्त का नगर विशेष।

काबुल कँधार खुरासान जेर कीन्हों जिन,
मुगुल पठान सेख सैयद हा रोत हैं।
अब लगि जानत हे बड़े होत पातसाह,
सिवराज प्रकटे ते राजा बड़े होत हैं॥

धुंधजोत=तेजहीन, प्रताप शून्य । गोत=समूह । विकट गिरि=वेडौल या भयानक पहाड़, दुर्गम पर्वत । ज़ेर=अधीन । अब लगि=अब तक ।

कहाँ तक गिनती गिनायी जाय, छोटे छोटे कितने ही राजाओं को शिवाजी ने मुहूर्त्तमात्र में क़ैद कर लिया। बड़ी बड़ी विकट पहाड़ियों पर रहने वाले नरेशों की भी प्रताप ज्योति धुंधली पड़ गई। काबुल, कन्धार, खुरासान आदि में रोने पड़े हुए हैं। मुग़ल, पठान, शेख़, सैयद सब आँसू बहा रहे हैं। अब तक लोग समझते थे कि बादशाह बड़े होते हैं पर अब शिवराज ने सिद्ध कर दिया कि नहीं, राजा ही बड़े होते हैं।

प्रमाण अलङ्कार—

(४५)

दुग्ग पर दुग्ग जीते सरजा सिवाजी गाजी,
उग्ग नाचे, डग्ग पर रुण्ड मुण्ड फरके।
'भूषन' भनत बाजे जीत के नगारे भारे,
सारे करनाटी भूप सिंहल को सर के॥
मारे सुनि सुभट पनारे वारे उदभट,
तारे लगे फिरन सितारे गढ़धर के।
बीजापुर बीरन के गोलकुंडा धीरन के,
दिल्ली उर मीरन के दाड़िम से दर के॥

दुग्ग=दुर्ग (क़िला)। उग्ग (उग्र) १ सख्त २ शिवजी। डग्ग=मार्ग। गाजी=धर्म युद्ध में विजय पाने वाला। दरके=फट गये। उद्भट-प्रसिद्ध। दुग्ग...फरके=जब समर विजयी शिवराज क़िलों पर क़िले जीतने लगे तो (डग्ग या डगर) रास्तों पर रुण्ड मुण्ड फड़कने लगे, और उग्ग अर्थात् महादेव जी नाचने लगे। कहीं कहीं 'उग्ग पर उग्ग नाचे' भी पाठ भेद है। उग्ग या उग्र का अर्थ आकाश और शिव (महादेव) किया जाता है अर्थात् शिवाजी की जीत देखकर शिवजी (उग्रजी) आकाश में आनन्द से नाचने लगे पर उग्ग (उग्र) का अर्थ आकाश कहीं देखा नहीं गया, हां, उग्र का नक्षत्र-समूह अर्थ अवश्य होता है।

धर्मवीर शिवराज की भारी जीत देखकर शिवजी नृत्य करने लगे और कटे हुए सिपाहियों के रुण्ड-मुण्ड रास्तों में फड़कने लगे। विजय दुन्दुभि की आवाज़ सुनकर करनाटक[1] के सब राजे प्राण बचाकर सिंहलद्वीप को भाग गये। परनाले[2] वाले वीरों का मरण सुनकर शिवाजी को बड़ी खुशी हुई और उन्होंने अपने दिन फिरे समझे। इस जीत के कारण शत्रुओं के हृदय अनार की तरह तड़कने लगा।

पूर्णोपमालङ्कार—

(४६)

मालवा उजैन भनि 'भूषन' भेलास ऐन,
सहर सिरोज लों परावने परत हैं।

१—शिवाजी ने करनाटक पर १६७६—७८ ई० में हमला किया था।
२—१६७६ ई० की जीत से मतलब है। परनारे गढ़ में इससे पूर्व भी कई लड़ाइयाँ हो चुकी थीं।

गोंडवानो तिलँगानो फिरँगानो करनाट,
रुहिलानो रुहिलन हिये हहरत हैं ॥
साहिके सपूत सिवराज तेरी धाक सुनि,
गढ़पति वीर तेऊ धीर न धरत हैं।
बीजापुर गोलकुंडा आगरा दिली के कोट,
बाजे बाजे रोज दरवाजे उघरत हैं ॥

ऐन=(अरबी) ठीक। परावने=भगदड़। हहरत हैं=डरते हैं। साहिके सपूत=शाहजी के पुत्र। बाजे बाजे रोज दरवाजे उघरत हैं=किसी किसी दिन दरवाजे खुलते हैं।

शिवाजी महाराज के अपूर्व आतङ्क का यह हाल है कि मालवा, उज्जैन, भेलसा[1] और सिरोज (शीराज[2]) तक भगदड़ मचा हुआ है। गोंडवानों[3] तैलङ्गों, फिरंगाना[4] वालों, करनाटकियों तथा रुहेलों के दिल दहला रहे हैं—थर थर काँप रहे हैं। बहादुरी का बिल्ला बाँधने वाले बड़े बड़े क़िलेदारों की हिम्मत पस्त हो चुकी है। उनमें धैर्य का नाम-ओ-निशान भी बाक़ी नहीं रहा। बीजापुर, गोलकुण्डा, आगरा और दिल्ली के क़िलों का तो यह हाल है कि मारे डर के उनके दरवाज़े तक नहीं खोले जाते। खोले भी जाते हैं तो ख़ूब देखभाल कर। ऐसा न हो कि कहीं शिवाजी क़िले के अन्दर घुस आवे।

१—भेलसा ग्वालियर राज्य में एक नगर है। २—सिरोज फ़ारिस के 'शीराज़' से मतलब मालूम होता है। ३—गोंडवानो, गोंडों के रहने का स्थान, उस समय यहाँ गोंड या गौड़ ही अधिक रहते थे। ४—फिरगाना से अभिप्राय बाबर के बाप की जन्मभूमि मध्य एशिया से है।

(४७)

मारि कर पातसाही खाकसाही कीन्ही जिन,
जेर कीन्हों जोर सों लै हद्द सब मारे की ।
खिसि गई सेखी फिसि गई सूरताई सब,
हिसि गई हिम्मति हजारों लोग सारे की ॥
बाजत दमामे लाखों धौंसा आगे घहरात,
गरजत मेघ ज्यों बरात चढ़ै भारे की ।
दूलहो सिवाजी भयो दच्छिनी दमामे वारे,
दिल्ली दुलहिनि भई सहर सितारे की ॥

ख़ाकसाही=धूल में मिला दी। ज़ेर=अधीन। खिस गई=गिर गयी। फिस गई=फिस्स हो जाना, नष्ट हो जाना। हिस गई=छूट गयी। सूरताई=शूरता। दमामे=नगाड़े।

शिवाजी ने सारी बादशाही पर सिक्का जमा दिया, दुश्मनों की शेखी, शोखी और बहादुरी मिट्टी में मिलादी। चारों ओर इस वीर विजयी हिन्दूपति की विजय दुन्दुभि बज रही है, जीत के डंके पर चोट पड़ रही है। इस समय यही ज्ञात होता है कि एक बड़ी भारी बरात चढ़ रही है जिसमें दूल्हा सितारांधीश शिवाजी और दुलहिन दिल्ली है।

(४८)

डाढ़ी के रखैयन की डाढ़ी सी रहति छाती,
बाढ़ी मरजाद जस हद्द हिन्दुवाने की ।
कढ़ि गई रैयति के मन की कसक सब,
मिटि गई ठसक तमाम तुरकाने की ॥

'भूषन' भनत दिल्लीपति दिल धक धका,
सुनि सुनि धाक सिवराज मरदाने की।
मोटी भई चण्डी बिनु चोटी के चबाय सीस,
खोटी भई सम्पति चकत्ता के घराने की ॥

रखैयन=रखाने वाले। डाढ़ी रहत=जलती रहती है। मरजाद=मर्यादा। कढ़ि गई=निकल गई। कसक=पीड़ा। बिनु चोटी के चबाय सीस=चोटी रहित मुण्डों (अर्थात् मुसलमानों के सिर) को चबाकर। खोटी सम्पति[1]=कम मूल्य का सिक्का। चकत्ता=औरंगज़ेब। चण्डी = काली।

शिवाजी की जीत देखकर मुसलमानों के दिल जलते रहते हैं। शिवाजी के प्रताप से हिन्दुत्व की सीमा का विस्तार होता जाता है, प्रजा के सारे संकट दूर हो गये। तुरकों की सारी अकड़ निकल गई। दिल्लीपति औरङ्गज़ेब का तो मारे डर के धकधका चल निकला है। इधर तो मरे हुए मुसलमानों के मुण्डों को चबा कर काली माई मोटी होती जारही है उधर बादशाह के सिक्के का मूल्य घटगया है, राजकीय मुद्रा की कोई परवा नहीं करता क्योंकि राज्य-भ्रष्ट होने पर किसी राजा का सिक्का खोटे सिक्के की तरह नहीं चला करता अभिप्राय यह है कि शत्रु धन, जन की हानि से बुरी तरह दुःखित हो रहा है।

अनुप्रास अलंकार--

१—किसी किसी टीकाकार ने 'खोटी सम्पति' का अर्थ कम संपत्ति किया है परन्तु खोटे का अर्थ ख़राब, घटिया या नकली होता है, कम नहीं। साधारण बोल चाल में भी खोटा रुपया, खोटा सोना और खोटी चाँदी कहने की प्रथा प्रचलित है।

(४६)

जिन फन फुतकार उड़त पहाड़ भार,
कूरम कठिन जनु कमल विदलिगो।
विष जाल ज्वालामुखी लवलीन होत जिन,
झारन चिकारि मद दिग्गज उगलि गो ॥
कीन्हों जेहिपान पयपान सों जहान सब,
कोलहू उछलि जल सिंधु खलभलिगो।
खग्ग खगराज महाराज सिवराज जू को,
अखिल भुजंग मुगलद्दलि निगलिगो ॥

फुतकार=फुसकार। कूरम (कूर्म)=कछुआ। बिदलिगो=दल गया, घिस-मिड़ गया। उगलिगो=निकाल कर बाहर फेंक दिया। खग्ग=खड्ग, तलवार। पय=दूध। चिकारि=चिंघाड़ कर। कूरम......विदलिगो=पृथ्वी को धारण करने वाला कच्छप कमल-पत्र की तरह छित्तर वित्तर हो जाता था। कोल=शूकर, बराह अवतार। खगराज=गरुड़। विष......उगलिगो=जिनके विषरूपी ज्वालामुखी पर्वत की लपटों (झारन) से दिग्गज तक चिंघाड़ कर मद उगल देते थे अर्थात मदहीन हो जाते थे। कहीं कहीं यह भी पाठ भेद है "विष जाल ज्वालामुखी लवली न होत जिन झारन चिकारि मद दिग्गज उगलिगो" अर्थात जिन ज्वालामुखी मुग़लों के विष जाल के मारे लवली (नेवाड़ी या कायफल) के पुष्प नहीं उगते थे......" कोल......खल भलिगो=पाताल में रहने वाले बराह भगवान के उछलने से समुद्र का पानी खलबला जाता था। खग्ग......निगलिगो=महाराज शिवराज का खगराज (गरुड़) रूपी खड्ग (तलवार) मुग़ल दलरूपी भुजंग (महा सर्प) को सटक गया। अर्थात् शिवाजी की तलवार ने सारे मुग़लों का काम तमाम कर दिया है।

इस छन्द में एक रूपक द्वारा मुग़ल साम्राज्य की सर्प से समता की गयी है जो अपने विषैले दंष्ट्रों से सारे संसार में संताप की अग्नि जला रहा था और अन्त में जो शिवाजी द्वारा नष्ट कर दिया गया।

(५०)

राखी हिन्दुवानी हिन्दुवान को तिलक राख्यो,
अस्मृति पुरान राखे वेद विधि सुनी में।
राखी रजपूती राजधानी राखी राजन की,
धरा में धरम राख्यो राख्यो गुन गुनी में॥
'भूषन' सुकवि जीति हद्द मरहट्टन की,
देस देस कीरति बखानी तब सुनी मैं।
साहि के सपूत सिवराज समसेर तेरी,
दिल्ली दल दाबि कै दिवाल राखी दुनी में॥

हिन्दुवानी=हिन्दूपन । अस्मृति-पुरान=स्मृति-पुराण, धर्मशास्त्र । धरा=पृथ्वी । दिवाल=मर्यादा, सीमा । जीति=जीत कर ।

महाराज शिवराज! मुग़ल-मान-मर्दन कारिणी आपकी तलवार धन्य है। सचमुच इसी भगवती की कृपा से हिन्दुओं के हिन्दूपन और धर्मशास्त्र की रक्षा हुई है। हिन्दू नरेशों का क्षत्रियत्व और उनका राज्य इसी की बदौलत सुरक्षित है। अगर आप इसे हाथ में न लेते तो गुणियों के गुणों और धर्म की रक्षा कभी न हो पाती। वीर मरहठे अन्य राजाओं की राज्य-सीमा पर अपना प्रभुत्व जमा कर कीर्ति लाभ कर रहे हैं यह सब आप ही के बाहुबल का प्रताप है।

पदार्थावृत्त दीपक अलङ्कार—

(५१)

वेद राखे विदित पुरान राखे सारयुत,
राम नाम राख्यो अति रसना सुघर में ।
हिन्दुन की चोटी रोटी राखी है सिपाहिंन की,
काँधे में जनेऊ राख्यो माला राखी गर में ॥
मीडि राखे मुगल मरोड़ि राखे पातसाह,
बैरी पीसि राखे बरदान राख्यो कर में ।
राजन की हद्द राखी तेग बल सिवराज,
देव राखे देवल स्वधर्म राख्यो घर में ॥

रसना=जीभ । सुघर=सुन्दर । देवल=देवालय, मन्दिर । गर=गला । बरदान राख्यो कर में=जिससे जो वायदा कर दिया वह पूरा किया । तेग बल=तलवार के ज़ोर से ।

शिवाजी ने वेद-पुराण, चोटी-जनेऊ, माला-मन्दिर आदि सब की पूरी रक्षा की । हिन्दू विरोधी मुसलमानों का मलिया-मेंट कर दिया—उन्हें किसी काम का न छोड़ा । हिन्दू धर्म और हिन्दू नरेशों को सुरक्षित रखने में इस महावीर ने जो शुभ प्रयत्न किये उनकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है ।

पदार्थावृत्त दीपक अलङ्कार—

(५२)

सपत गनेस चारो ककुभ गजेस कोल,
कच्छप दिनेस धरैं धरनि अखंड को ।
पापी घाल धरम सुपथ चालें मारतण्ड,
करतार प्रन पालैं प्रानिन के चंड को ॥

'भूषन' भनत सदा सरजा सिवाजी गाजी,
म्लेच्छन को मारै करि कीरति घमंड को ।
जग काजवारे निहचिंत करि डारे सब,
भोर देत आसिस तिहारे भुजदण्ड को ॥

सपत नगेस=सप्त (सात) प्रधान पहाड़ । ककुभ गजेस—चारों दिशाओं को धारण करने वाले चार दिग्पाल हाथी । कोल=वराह भगवान । दिनेस=सूर्य । घालें=मारते हैं । चण्ड=बल । जग काज वारे=साधारण काम-काजी लोग, प्रजाजन । निहचिन्त=निश्चिंत, वेफिक्र । करतार प्रन=जब जब धर्म की हानि और पाप की वृद्धि होती है तब तब धर्म की स्थापना और भक्तों की रक्षा के लिये भगवान अवतीर्ण होते हैं यही 'करतार प्रन' है ।

कुलाचल पर्वत, चारों दिग्पाल, वराह भगवान, कच्छप और सूर्य सम्पूर्ण पृथ्वी को अनायास और स्वभावतः ही धारण किये हुए हैं । पापी स्वभाव से ही धर्म का नाश किया करते हैं, सूर्य भी अपनी सहज गति से चलता है । 'करतार' परमात्मा अपनी 'यदायदाहि' वाली धर्मरक्षा की प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के लिए राक्षसों को मारते हैं । ठीक ऐसे ही धर्मवीर शिवाजी म्लेच्छों को मार कर उनका नाश और अपनी कीर्ति का प्रसार किया करते हैं । उन्होंने अपने इस कर्त्तव्य द्वारा सांसारिक पुरुषों को राक्षसों से 'निर्भय' बना दिया है, जिससे सब लोग उनके बाहु-दण्ड को आशीर्वाद दे रहे हैं ।

सप्तपर्वत—हिमवान, निषध, विन्ध्य, माल्यवान, पारियात्रक, गन्धमादन और हेमकूट ।

अलङ्कार-निर्देश

१—उपमालङ्कार—

जहां एकसे धर्म, स्वभाव, शोभा तथा दशा वाले दो पदार्थों की तुलना की जाती है, वहां उपमालङ्कार होता है। जिसकी समानता की जाती है वह 'उपमेय' जिससे उपमा दी जाती है वह 'उपमान' जिस अर्थ में समानता देते हैं वह धर्म है। जिन 'समान' या 'से' आदि शब्दों से समता के भाव का भान हो वह 'वाचक' है। उदाहरणार्थ 'शिवाबावनी' का दूसरा छन्द देखिये—'तारा सो तरनि' यहां तरनि 'उपमेय' तारा 'उपमान' और सो 'वाचक' है। 'तरनि' कैसा 'तारा सो, तारा कैसा है 'छोटा' छोटा जो धर्म है वह लुप्त है।

२—पूर्णोपमा—

जहां उपमा के चारों अङ्ग प्रत्यक्ष कथन किये जांय वहां पूर्णोपमालंकार होता है। "केरा केसे पात विहराने फन सेस के" (छन्द सं ३) यहां फन उपमेय, केरा के पात उपमान, विहराने साधारण धर्म और से वाचक होने से पूर्णोपमालंकार हुआ।

३—अप्रस्तुत प्रशंसा—

प्रस्तुत के वर्णन के लिये अप्रस्तुत का ऐसे ढंग से वर्णन करना कि प्रस्तुत स्पष्ट सूचित होजाय। छन्द संख्या ४ इसका उदाहरण है।

४—शुद्धापन्हुति—

असली बात को छिपाकर दूसरी बात वर्णन करना। जैसे (छन्द ५ में देखिये) " बद्दल न होहिं दल दच्छिन घमण्ड

माहिं " अर्थात् यह बादल नहीं उठे बल्कि अत्यन्त घमण्ड से दक्षिणी सेना उमड़ रही है। इत्यादि—

५—अनुप्रास—

व्यंजनों का साम्य होने से, चाहे स्वर एक से हों अथवा न हों, अनुप्रास-अलंकार होता है। यथा—'कीबी कहें कहा' 'गरीबी गहें', 'आगरे अगारन,' 'बांधती न बारन,' (छन्द सं० ७)

६—यमक—

जहां एक ही शब्द भिन्न अर्थ सहित अनेक बार आता है वहां यमक होता है। यथा— घोर मन्दर (ऊंचे महल) घोर मन्दर (मन्दराचल पहाड़) 'तीन बेर खातीं' (तीन दफ़े खातीं) 'तीन बेर खाती हैं' [तीन बेर (फल) खाती हैं] इत्यादि— (छन्द संख्या ८)

७—पर्यायोक्ति—

किसी बात को सरल रीति से न कहकर घुमा फिरा कर कहना पर्यायोक्ति है यथा—"मक्कामिस साह उतरत दरियाव हैं" अर्थात् डर के मारे तो भागते हैं परन्तु बहाना मक्का जाने का करते हैं। (छन्द संख्या १३)

८—उत्प्रेक्षा—

जहां अन्य वस्तु, हेतु और फल में दूसरी वस्तु हेतु, फल की सम्भावना करली जाय वहां उत्प्रेक्षा होती है। इसके चिन्ह जनु, मनु या जानो, मानो आदि हैं। यथा—" ताको (शाहजहाँ) क़ैद कियो मानो मक्के आग लाई है " अर्थात् औरंगज़ेब ने अपने बाप शाहजहां को क़ैद कर मानो मक्के में आग लगादी है। यानी सारे दीन पर पानी फेर दिया है। (छन्द संख्या १४)

९—विषम—

बेजोड़ कामों अथवा अनमिल वस्तुओं का कथन करना विषमालंकार होता है। यथा 'सबनि के ऊपर ही ठाढ़ो रहिवे के जोग, ताहि खरो कियो जाय जारिन के नियरे' (छन्द सं० १७)

१०—समअभेद रूपक—

जिसमें उपमान के समस्त अंगों का उपमेय के समस्त अंगों में अभेद किया गया हो। यथा 'चम्पा शिवराज है' (छन्द सं० १८) अर्थात् जिस प्रकार चम्पा फूल में तेज़ ख़ुशबू होती है उसी प्रकार चम्पारूपी शिवराज का प्रचण्ड प्रताप प्रसरित हो रहा है, परन्तु औरंगजेबरूपी भौंरा उसका रस नहीं चूस सकता।

११—वृत्त्युनुप्रास—

जब एक ही अथवा कई वर्णों की कई बार समता हो तो उसे वृत्त्यनुप्रास कहते हैं। यथा—'कण्टक, कटक, काटि, कीट से उड़ाये केते' (छन्द सं० २६)

१२—काव्यलिंग—

जहां युक्ति से वाक्यार्थ और पदार्थ का समर्थन किया जाय वहां काव्यलिंग होता है। यथा–केतिक··आदि (छन्द सं० २७) का वर्णन कर 'सिवराज बली' के बल की तारीफ़ की गई है। अर्थात् शिवराज नाम के ही बली न थे बल्कि उन्होंने अमुक अमुक वीरता के काम भी किये, इससे उनकी बलवत्ता सिद्ध है। युक्ति से वाक्यार्थ और पदार्थ का यही समर्थन हुआ।

१३—लोकोक्ति—

सामान्य कथन का लोकोक्ति से समर्थन किया जाना लोकोक्ति अलंकार कहाता है। यथा—'सोवतसिंह न जाय जगावो' अथवा 'दिवाल की राह न धावो' (छ० स० ३१)

१४—छेकोक्ति—

जिस स्थान पर किसी लोकोक्ति का विशेष अभिप्राय से प्रयोग किया जाय वहां छेकोक्ति होती है यथा—'सौ सौ चूहे खाय कै बिलारी वैठी तप कै' (छन्द संख्या १५)

१५—निदर्शना—

भिन्नता होते हुए भी दो वाक्यों का अर्थ समता सूचक किया जाना 'निदर्शना' कहाता है। यथा 'गरुड़ को दावा सदा-नाग के समूह पर' वाक्य के अर्थ की समता 'जहां पातसाही तहाँ दावा सिवराज को' से की गयी है। (छ० स० ३५)

१६—आक्षेप—

कोई बात कह कर फिर उसका निषेध करना 'आक्षेप' कहाता है। यथा—'दारा की न दौर यहां' इसमें औरंगजेब द्वारा दारा पर चढ़ाई किये जानेका विस्तृत वर्णन करके फिर उसकी नीचता दिखायी है। (छन्द सं० ३६)

१७—मालोपमा—

एक ही उपमेय के अनेक उपमान होना। यथा—"सक्र जिमि सैल पर···सिवराज देखिये" (छ० सं० ३८)

१८—अतिशयोक्ति—

औचित्य से अधिक बढ़ाकर कहना अतिशयोक्ति कहलाती है। यथा—'सिवराज तेरे त्रास दिल्ली भयो भुवकम्प' इत्यादि—(छ० सं० ४०)

१९—पदार्थवृत्त दीपक—

शब्द और अर्थ दोनों को बार बार दुहराने पर पदार्थवृत्त दीपक होता है। यथा—(छन्द संख्या ५० में) 'राखी राखी' कई बार दुहराया गया है।

इतिहास मर्मज्ञों तथा प्रसिद्ध २ पत्रों द्वारा प्रशंसित

हिन्दू धर्म्म के जीर्णोद्धारकर्त्ता, यवन साम्राज्य विध्वंसकारी—

प्रातःस्मरणीय महाराष्ट्र केसरी

शिवाजी

का

ऐतिहासिक अन्वेषण पूर्ण

वृहज्जीवन चरित्र ।

लेखक—पं० ताराचरण अग्निहोत्री बी० ए०

सम्पादक—श्यामाचरण राय, एम० ए०, एल-एल० बी०, एम० आर० ए० एस०, एफ० आर० ई० एस०

यदि आप जानना चाहते हैं—"दासता के वायुमंडल में अवतीर्ण हो कर भी स्वावलम्ब और स्वतन्त्रता के भाव किस प्रकार इनके हृदय में जमे, किस प्रकार इन्होंने अपना संगठन कार्य किया और उसमें कैसे सफलता मिलती गई, उनका अदम्य उत्साह, असीम धैर्य, आश्चर्यमय कर्त्तव्य बुद्धि और अनिर्वचनीय धर्म परायणता, ध्येय की ओर ले जाने में किस प्रकार सहायक हुई, दुर्दमनीय मुग़ल साम्राज्य के ध्वंस करने में किन २ कौशलों से काम लिया गया। अन्त में किस प्रकार विजयी हो कर महाराष्ट्र साम्राज्य स्थापित किया", तो इस पुस्तक को पढ़िये। बड़ी ही खोज और विवेचना के साथ सरल और सुपाठ्य भाषा में यह बातें समझाई गई हैं। हिन्दी के ऐतिहासिक साहित्य में इस पुस्तक का बहुत ऊँचा स्थान है। मूल्य केवल १)

पताः—रामप्रसाद एण्ड ब्रदर्स
बुकसेलर्स, आगरा।

...के प्रबन्ध से शान्ति प्रेस, आगरा में मुद्रित।

श्री गोस्वामी तुलसीदास कृत

कवितावली

(सटीक)

(जिसमें हनुमान बाहुक भी सम्मिलित है)

टीकाकार—पं० ठाकुर प्रसाद शर्मा, एम. ए., एल-एल. बी.

पं० ठाकुर प्रसाद शर्मा हिन्दी के लब्ध प्रतिष्ठ-लेखक और कवि तथा तुलसीदास के विशेषज्ञ हैं। आपने इस टीका को सरल और सर्वांगपूर्ण बनाने का प्रयत्न किया है। इसमें पुरानी टीकाओं की भांति छन्दों के अर्थ नहीं दिये हैं, उनके कठिन शब्दों और वाक्यों को भलीभांति समझाया है। सब अन्तर्कथाएँ दी हैं, अलंकार, रस आदि काव्य के अंगों को भी संक्षेप में बताया है। और आत्मचरित सम्बन्धी उल्लेखों का स्पष्टीकरण किया है। कवि के भावों को अच्छी तरह समझाने की कोशिश की है और जहाँ कहीं एक से अधिक उचित अर्थ हो सकते हैं वहाँ वे भी दिये हैं। यदि कहीं टीकाकारों में मत भेद है तो वह भी दिखाया है और अपना मत भी प्रकट किया है। इसके अतिरिक्ति लगभग एक दर्जन कवियों के समान-भावदर्शक उद्धरण स्थान स्थान पर दिये हैं। कोई भी कठिनाई ऐसी नहीं रही, जिसके ऊपर ध्यान न दिया गया हो। आरम्भ में लगभग २५ पृष्ठों की एक प्रस्तावना है जिस में तुलसीदास का जीवन-चरित प्राचीन और नवीन खोज के अनुसार दिया है और तुलसीदास और उनके काव्य तथा कवितावली और हनुमान बाहुक के ऊपर आलोचनात्मक रीति से विचार किया है। लेखन शैली सरल और मनोरंजक है। हम समझते हैं कि यह टीका सर्वोत्तम है। काग़ज़ और छपाई सुन्दर है। मूल्य १॥)

रामप्रसाद एण्ड ब्रदर्स

बुकसेलर्स, आगरा।